श्री तत्त्वार्थसूत्र
मण्डल विधान

रचयिता

मुनि श्री प्रणम्यसागर जी

- प्रकाशक -

आर्हत विद्या प्रकाशन

गोटेगाँव

- कृति :
  श्री तत्त्वार्थसूत्र मण्डल विधान
- आशीर्वाद :
  आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज
- कृतिकार :
  मुनि श्री प्रणम्यसागरजी महाराज
- संस्करण :
  द्वितीय 2021
- आवृत्ति :
  1100
- व्यवस्था राशि : 25/-
- प्रकाशक :
  आर्हत विद्या प्रकाशन, गोटेगाँव
- प्राप्ति स्थान :
  आर्हत विद्या प्रकाशन,
  गोटेगाँव मो. 94258-37476

  अर्ह शरणम् भवन
  अष्टापद के सामने (हस्तिनापुर अतिशय क्षेत्र)
  मो. 87554-05218
- मुद्रक :
  आर्हत विद्या प्रकाशन
  गोटेगाँव मो. 94258-37476

प्रस्तावना

'तत्त्वार्थसूत्र' जैन दर्शन की गीता है। यह ग्रन्थ दिगम्बर-श्वेताम्बर सकल जैन समाज में सुप्रसिद्ध है। इस ग्रन्थ पर अनेकों संस्कृत टीकाएँ उपलब्ध हैं। हिन्दी भाषा में पद्यमयी काव्य रचना सबको रुचिकर लगती है। इस ग्रन्थ का पद्य में अनुवाद बहुत कम उपलब्ध होता है। हो या न हो किन्तु ज्ञान का श्रुतज्ञानमय उपयोग करने के लिए बहुत पहले 1997 ई० में यह ग्रन्थ का अनुवाद पूर्ण किया। इस ग्रन्थ का पद्यानुवाद 'तारंगाजी' सिद्धक्षेत्र से ब्रह्मचारी अवस्था में प्रारम्भ किया था। उसी समय श्रीगुरु विद्यासागर जी महाराज ने मुनिश्री समयसागर जी से तत्त्वार्थसूत्र का ज्ञान प्राप्त कराया। मुनि श्री से उस समय तत्वार्थसूत्र पढ़कर ही पद्यानुवाद करने का भाव बना। बाद में तत्त्वार्थसूत्र की नययोजना की। जिससे उन्हीं को अर्घ्य का मंत्र बना दिया। फिर बहुत समय बाद तत्त्वार्थसूत्र की पूजन की बन गई। इन सब कार्यों की समायोजना होकर यह पुस्तक एक विधान का रूप बन गई। दशलक्षणपर्व में प्रतिदिन एक अध्याय की जिस तरह वाना की परम्परा है वैसे ही प्रतिदिन एक अध्याय के प्रत्येक सूत्र के अर्घ्य चढ़ाकर इन सूत्रों के प्रति बहुमान बढ़ाकर जिनवाणी की भक्ति की जा सकती है। एवं अन्य समय में भी अनुकूलतानुसार विधान के रूप में भी इसकी आराधना की जा सकती है। सभी भव्य जीव इस श्री तत्त्वार्थसूत्र मण्डल विधान' से श्रुतभक्ति को बढ़ाकर आत्मकल्याण की ओर उन्मुख हों इन्हीं मंगल भावनाओं से श्रीगुरु के चरण कमलों में नमोऽस्तु सहित..

मुनि प्रणम्यसागर

श्री तत्त्वार्थसूत्र विधान मण्डल

माण डना

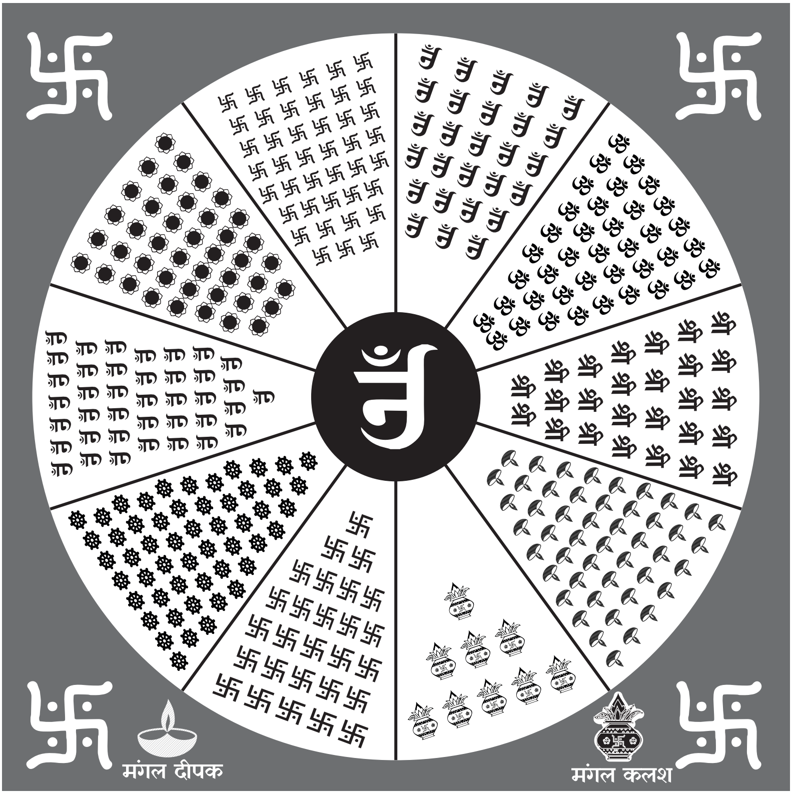

तत्त्वार्थ सूत्र पूजन

(मुनि प्रणम्यसागर जी)

(स्थापना)

जिनमुख निर्गत तत्त्वज्ञान पा, उमास्वामि आचार्य महान
लिखे सूत्र संस्कृत भाषा में, आद्य ग्रन्थ जो बना प्रधान।
जिन दर्शन तत्त्वार्थसूत्र में, देखो पूर्ण समाया है
दशाध्याय की पूजन करने, मन मेरा ललचाया है॥

इति तत्त्वार्थ सूत्र स्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपामि।

मोक्ष सभी मानें कहते हैं, किन्तु मार्ग ना जानें लोग
मार्ग बताते उपकारी गुरु, रत्नत्रय का धारो योग।
तत्त्वज्ञान ही कर्म मलों को, आत्मदेश से विलग करे
इसीलिए मैं पूजन करता, शुद्ध दृष्टि का लक्ष्य धरे॥

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित तत्त्वार्थ सूत्रे दशाऽध्यायेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

तन की शीतलता से क्या हो, मन यदि शीतल नहीं बने
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित ही, भव-भव के संताप हने।
तत्त्वज्ञान ही....

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव – उमास्वामिविरचित - तत्त्वार्थ-सूत्रे दशाऽध्यायेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरपद जनपद अरु चक्रीपद, राज समाज पदापद हैं
निरुपधि निज पर सम्पद मानो, अक्षय और निरापद हैं।
तत्त्वज्ञान ही....

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव – उमास्वामिविरचित - तत्त्वार्थ-सूत्रे दशाऽध्यायेभ्यो अक्षत पद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

काम भोग अरु ज्ञानयोग का, है विपरीत सदा ही मेल
सर्व नेवले की संगति सा, नहीं कदाचित संग हो खेल।
तत्त्वज्ञान ही....

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव – उमास्वामिविरचित - तत्त्वार्थ-सूत्रे दशाऽध्यायेभ्यो कामबाण विनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

जो कुछ भी रसना को भाया, खूब खिलाया जी भर के
फिर भी कुछ भी हाथ न आया, मन खाली खा पी करके।
तत्त्वज्ञान ही....

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित तत्त्वार्थ सूत्रे दशाऽध्यायेभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह, राग का विभ्रम छाया, तिमिर यही है सघन यहाँ
ज्ञान ज्ञानमय ज्ञान अनुभवै, ऐसा दीपक मिले कहाँ ?
तत्त्वज्ञान ही....

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव – उमास्वामिविरचित - तत्त्वार्थ-सूत्रे दशाऽध्यायेभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कालगुरु की धूप अग्नि में, नासा को सुख पहुँचाती
कर्म नाश हों तप अग्नि से, ऐसी लौ ना जल पाती।
तत्त्वज्ञान ही....

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थ-सूत्रे दशाऽध्यायेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हरे भरे या सूखे साखे, सब फल नश्वर कहलाते
फल प्रमाण का ही अविनश्वर, बुध प्रमाण से हैं पाते।
तत्त्वज्ञान ही....

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थ-सूत्रे दशाऽध्यायेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल चन्दन भोजन दीपन, धूपन चावल कुसुमन ले
जिनपति मुख निर्गत जिनवाणी, पूजन अर्घ्यं न वसु विध ले।
तत्त्वज्ञान ही...

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव- उमास्वामिविरचित- तत्त्वार्थ- सूत्रे दशाऽध्यायेभ्यो अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ प्रत्येकाऽध्याय अर्घ्यावली

१. सम्यग्दर्शन पंच ज्ञान अरु सप्त नयों का सम्यग्ज्ञान
यह अध्याय प्रथम कहता है क्या सम्यक् क्या मिथ्याज्ञान।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रूचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥१॥

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थ-सूत्रे प्रथमाऽध्यायेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

२. औपशमिक आदिक भावों का, संसारी-मुक्तिगत जीव
वेद जन्मत्रय योनि सभी का, बोध दिया अध्याय द्वितीय।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रूचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥२॥

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थ-सूत्रे द्वितीयाऽध्यायेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

३. अधोलोक के नरकबिलों की, द्वीप समुदों की संख्या
परिवर्तन तन कालचक्र का, तिर्यग् जग की भी संज्ञा।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रूचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥३॥

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थ-सूत्रे तृतीयाऽध्यायेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

४. रहे चार विध देवसमूह, उनकी संख्या आयुवास
सुखइन्द्रिय अवधिज्ञान यदि, चौथा पाठ रहा मन पास।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रूचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥४॥

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थ-सूत्रे चतुर्थाऽध्यायेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।.

५. पुद्गल धर्म अधर्माकाश काल द्रव्य का वर्णन भी
द्रव्य गुणों पर्यायों के संग पाठ पाँचवां सुनें सभी।

जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रूचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥५॥

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित तत्त्वार्थ सूत्रे पंचमोऽध्यायेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

६. मन वच कायों के त्रययोग, प्रति विशिष्ट विधि का हो आव
अशुभ और शुभ भावों का, यह खेल छठा अध्याय दिखाव।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रूचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥६॥

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित तत्त्वार्थ सूत्रे छट्ठाऽध्यायेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

७. शुभ उपयोग व्रतों से होता, पुण्यबंध अघ निर्जर भी
कैसे होवे निरतिचार मन, पाठ सिखाए सप्तम ही।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रूचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥७॥

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित तत्त्वार्थ सूत्रे सप्तमाऽध्यायेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

८. अष्टकर्म के बन्धन की विधि, इस अध्याय में बतलाई
बन्ध तत्त्व का ज्ञान किया तो, बन्ध तत्त्व से बच भाई ।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रूचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥८॥

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित तत्त्वार्थ सूत्रे अष्टमाऽध्यायेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

९. व्रत समिति गुप्ति पालन से, संवर निर्जर होता है
धर्म शुक्ल ध्यानों का फल ही, नौवा पाठ संजोता है।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रूचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥९॥

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित तत्त्वार्थ सूत्रे नवमाऽध्यायेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

१०. केवलज्ञानी होकर आतम, सिद्ध मोक्ष पद पाता है
यह अध्याय बताता दसवां, शिव सुख अनुपम लाता है।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रूचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥१०॥

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थ-सूत्रें दशमऽध्यायेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

किया महा उपकार गुरु ने, सूत्र बनाए प्रामाणिक
बड़े-बड़े आचार्यों ने भी, टीका लिखी बड़ी तात्विक।
एक-एक सूत्रों में कैसा, गहरा अर्थ समाया है
पूज्यपाद अकलंकदेव ने, इनका हार्द बताया है॥१॥
तथा आर्य विद्यानन्दि ने, पर प्रवादि मति वाणों से
सूत्रों की रक्षा की भारी, सश्लोक और वार्तिक से।
रहे अभेद्य सूत्र हर एक, बौद्ध सांख्य नैयायिक से
भव तरने की नाव मिली है, उमास्वामि गुरु नाविक से॥२॥
तत्त्व और छह द्रव्यों का सब, वर्णन यह लोकोत्तर है
तर्क कुतर्क सभी प्रश्नों का, इसमें मिलता उत्तर है।
जयवन्तों सर्वज्ञ देव श्री, वीर प्रभु हित उपदेशी
जयवन्तों गणधर परमेष्ठी, जग हितकारी जिनभेषी॥३॥
ज्यों दर्पण में सब दर्शन पा नैनवन्त हर्षाये हैं
त्यों ही ये तत्त्वार्थसूत्रजी, भव्यनि मोक्ष कराये हैं।
जीव अजीव बन्ध अरु आस्रव संवर और निर्जरा मोक्ष
सप्त तत्त्व का इसमें वर्णन, जीवों को दे सम्यक् बोध॥४॥

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित तत्त्वार्थ सूत्रे दशमाऽध्यायेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपेत्॥

तत्त्वार्थ सूत्र विधान

मुनि प्रणम्य सागर जी कृत

अर्घ्यावलि

प्रथम अध्याय

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्ष-मार्गः॥१॥

(दोहा)

लक्ष्य ज्ञात यदि हो गया, मारग को पहिचान।
सम्यक दृग ज्ञानाचरण, सच्चा मारग जान॥१॥

ऊँ ह्रीं भेदकल्पना सापेक्ष अशुद्ध द्रव्यार्थिकनयेन सूत्रमिदं मोक्षमार्ग-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्त्वार्थ- श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्॥२॥

मात्र तत्त्व या अर्थ पे, श्रद्धा से ना होय।
तत्त्वारथ श्रद्धान से, सम्यक दर्शन होय॥२॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं सम्यग्दर्शन-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन्-निसर्गा-दधिगमाद्-वा॥३॥

पर से या पर ज्ञान बिन, उपजे सम्यकदर्श।
भेद अधिगमज निसर्गज, देते सबको हर्ष॥३॥

ऊँ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं भेदद्वयसहितसम्यक्त्व-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवा-जीवास्रव-बन्धसंवर-निर्जरा-मोक्षास्-तत्त्वम्॥४॥

जीवाजीवास्रव तथा, बन्ध तत्त्व बतलाय।
संवर निर्जर मुक्ति सह, तत्त्व सप्त कहलाय॥४॥

ऊँ ह्रीं विशेषव्यवहारनयेन सूत्रमिदं सप्ततत्त्व-श्रद्धान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाम-स्थापना-द्रव्य भावतस्-तन् -न्यासः॥५॥

चौ निक्षेपो से बने, सही वस्तु व्यवहार ।

नामा थापन द्रव्य जुत, भाव दूर व्यभिचार॥५॥

ॐ ह्रीं विकल्पनयेनसूत्रमिदं निक्षेपज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रमाण-नयै-रधिगमः॥६॥

नय प्रमाण के ज्ञान से, होत यथारथ ज्ञान।

नैना नय के नैक हैं, द्वय विध हो परिमाण॥६॥

ॐ ह्रीं ज्ञाननयेन सूत्रमिदं सम्यग्ज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्देश-स्वामित्व-साधनाधि-करण-स्थिति-विधानतः॥७॥

स्वामी साधन थिति तथा, अधिकरणा निरदेश।

भेद सहित ये भेद छह, देते ज्ञान विशेष॥७॥

ॐ ह्रीं सामान्यनयेन सूत्रमिदं निर्देशादिज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्-संख्या-क्षेत्र-स्पर्शन-कालान्तर-भावाल्प- बहुत्वैश्च॥८॥

सत् संख्या संस्पर्श से, अल्पबहुत वा काल।

क्षेत्र भाव अन्तर कहे, अठ अनुयोग विशाल॥८॥

ॐ ह्रीं विशेषनयेन सूत्रमिदं अनुयोगद्वारज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मति-श्रुतावधि-मनःपर्यय-केवलानि-ज्ञानम्॥९॥

आतम में गुण ज्ञान के, सम्यक पाँच विधान।

मति श्रुत अवधी वा मनः, -पर्यय केवलज्ञान॥९॥

ॐ ह्रीं उपचरित-सद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं पञ्चज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तत् प्रमाणे॥१०॥

सम्यक तो वि-ज्ञान है, मिथ्याज्ञान कु-ज्ञान।

पंच भेद को ही कहा, सच्चा ज्ञान महान॥१०॥

ॐ ह्रीं भावनयेन सूत्रमिदं प्रमाण-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आद्ये-परोक्षम्॥११॥

पंच भेद जो हैं कहे, उनमें दोय परोक्ष।
मति श्रुत इनके नाम हैं, होता इनसे मोक्ष॥११॥

ऊँ ह्रीं इन्द्रिय-उपाधि-सापेक्ष-अशुद्ध-द्रव्यार्थिकनयेन सूत्रमिदं परोक्षप्रमाण-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्यक्ष-मन्यत्॥१२॥

आतम में ही उपजते, ज्ञान अन्त के तीन ।
विकल-सकल के भेद को, पाकर हो स्वधीन॥१२॥

ऊँ ह्रीं इन्द्रिय निरपेक्ष-शुद्ध द्रव्यार्थिकनयेन सूत्रमिदं प्रत्यक्षप्रमाण-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मतिःस्मृतिः संज्ञा –चिन्ताभिनिबोध इत्य नर्थान्तरम्॥१३॥

मति स्मृति संज्ञा तथा, चिन्ता अभिनिबोध।
अन्य नाम मतिज्ञान के, करो न्याय से शोध॥१३॥

ऊँ ह्रीं शब्दनयेनसूत्रमिदं पूर्णमतिज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तदिन्द्रिया-निन्द्रिय-निमित्तम्॥१४॥

पंचेन्द्रिय मन द्वार छह, के द्वारा जो ज्ञान।
मती ज्ञान होता सभी, विधि-बन्धों के जान॥१४॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-सद् भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं निमित्तज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अवग्रहे-हावाय-धारणाः॥१५॥

अवाय ईहा धारणा, और अवग्रह भेद।
मतिज्ञान के हैं सभी, कहें विश्व विद्वेद॥१५॥

ऊँ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं मतिज्ञानपूर्णक्षयोपशम-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु-बहुविध-क्षिप्रा-निःसृता-नुक्त-ध्रुवाणां सेतराणां॥१६॥

बहु बहुविध क्षिप्रज तथा, ध्रुव, उभरा, बिन उक्त।
उलट भेद मिल कर बने,बारह विध संयुक्त॥१६॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं सर्वभेदज्ञान-प्राप्तये

अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थस्य॥१७॥

बहु बहुविध आदिक रहे, अर्थ विशेषण जान।
निराकरण मत अन्य के, कारण किया मिलान॥१७॥

ॐ ह्रीं भावनयेनसूत्रमिदं पदाथविज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यञ्जनस्याव-ग्रहः॥१८॥

अर्थ अवग्रह के बनें, चार भेद मतिज्ञान।
व्यंजन वस्तु का बने, एक अवग्रह ज्ञान॥१८॥

ॐ ह्रीं भावनयेन सूत्रमिदं अस्पष्टज्ञानावबोध-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न चक्षु-रनिन्द्रियाभ्याम्॥१९॥

आँख तथा मन के बिना, चौ इन्द्रिय से होय।
व्यंजन सारी वस्तु का, भान जरा सा होय॥१९॥

ॐ ह्रीं नास्तिनयेनसूत्रमिदं अस्पष्टज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुतं मति-पूर्वं द्वय नेक-द्वादश-भेदम्॥२०॥

दो अनेक बारह तथा, भेद प्रभेद बतात।
मतिज्ञान पश्चात हो, श्रुत ज्ञान कहलात॥२०॥

ॐ ह्रीं विशेष व्यवहारनयेन सूत्रमिदं श्रुतज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव-प्रत्ययोऽवधि-र्देव-नारकाणाम्॥२१॥

द्रव्य आदि सीमा सहित, रूप पदारथ ज्ञान।
भव प्रत्यय से ही मिले, सुर नारक को ज्ञान॥२१॥

ॐ ह्रीं भवसापेक्षपर्यायार्थिक नयेन सूत्रमिदं अवधिज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षयोपशम-निमित्तः षड्-विकल्पः शेषाणाम्॥२२॥

क्षयोपशम के हेतु से, नर पशु गति में ज्ञान।
छह प्रकार का होत है, अवधि ज्ञान महान॥।२२॥

ॐ ह्रीं उपचरितसद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं विशिष्टज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋजु-विपुलमती मनः पर्ययः॥२३॥

दूजे के मन तिष्ठते, कुटिल सरल जो भाव।
विपुल ऋजु मती ज्ञान के, मुनिवर देत बताय॥२३॥

ॐ ह्रीं सामान्य-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं मनःपर्ययज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विशुद्ध्य-प्रतिपाताभ्यां तद्-विशेषः॥२४॥

अप्रतिपाती वा विशुद्ध, कारण बने विशेष।
मनः पर्यय के भेद ये, जानें रूपी भेष॥२४॥

ॐ ह्रीं उपचरित-सद् भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं विशुद्धज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विशुद्धि-क्षेत्र-स्वामि-विषयेभ्योऽवधि-मनःपर्ययोः॥२५॥

खेत, विशुद्धी, विषय वा, नाथ अपेक्षा भेद।
मनपर्यय से अवधि में, है विशेष से भेद॥२५॥

ॐ ह्रीं उपचरित-सद् भूत व्यवहारनयेन सूत्रमिदं विशिष्टज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मति-श्रुतयो-र्निबन्धो द्रव्येष्व-सर्व-पर्यायेषु॥२६॥

सब द्रव्यों को जानता, लेकिन कुछ पर्याय।
मति श्रुत ज्ञान बना रहा, विषय बहुत सकुचाय॥२६॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं द्रव्यर्यायज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूपिष्व-वधेः॥२७॥

रूपी वस्तु जानता, सीमा के अनुकूल ।
अवधि ज्ञान का विषय भी, बता सके भवकूल॥२७॥

ॐ ह्रीं भावनयेन सूत्रमिदं सर्वरूपीज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तदनन्त-भागे मनःपर्ययस्य॥२८॥

अवधिज्ञान उत्कृष्ट से, अणु को विषय बनाय।
भाग अनन्ते सूक्ष्म को, मनपर्यय बतलाय॥२८॥

ॐ ह्रीं भावनयेन सूत्रमिदं सूक्ष्मज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व-द्रव्य-पर्यायेषु केवलस्य॥२९॥

सकल द्रव्य के गुण सकल, और सकल पर्याय।
केवलज्ञानी को दिखे, निज चेतन सुखदाय॥२९।

ॐ ह्रीं उपचरित-असद् भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं केवलज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकादीनि भाज्यानि युगपदे-कस्मिन्ना-चतुर्थ्यः॥३०॥

आतम में इक साथ हों, एक आदि चौ ज्ञान।
क्षायिक केवलज्ञान अन, क्षयोपशम ही जान॥३०॥

ॐ ह्रीं विशेषनयेन सूत्रमिदं एकादिज्ञानभेद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मति-श्रुतावधयो विपर्ययश्च॥३१॥

मिथ्यादर्शन उदय में, होता मिथ्याज्ञान।
मति श्रुत अवधीज्ञान को, मिथ्या भी पहिचान॥३१॥

ॐ ह्रीं पर साक्षेप-अशुद्ध-द्र०यार्थिकनयेन अस्वभावनयेन च सूत्रमिदं मिथ्याज्ञान-विनाशाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सद-सतो-रविशेषाद्य-दृच्छोप-लब्धे-रुन्मत्तवत्॥३२॥

दर्शन अच्छा ना बुरा, ज्ञान बुरा बन जाय।
मिथ्या ज्ञानी मत्त-मद, सदसत ना लख पाय॥३२॥

ॐ ह्रीं अनियतनयेन सूत्रमिदं विपरीतज्ञान-विनाशाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नैगम-संग्रह-व्यवहा-रर्जु-सूत्र-शब्द-समभिरूढैवंभूता-नयाः॥३३॥

नैगम संग्रह शब्द सह, ऋजूसूत्र व्यवहार।
समभिरूढ नय सात हैं, एवंभूत प्रकार॥३३॥

ऊँ ह्रीं विशेष व्यवहारनयेन सूत्रमिदं नयज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(महाअर्घ्य)

सम्यग्दर्शन पंच ज्ञान अरु, सप्त नयों का सम्यग्ज्ञान
यह अध्याय प्रथम कहता है क्या सम्यक् क्या मिथ्याज्ञान।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रुचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥

ऊँ ह्रीं जिनमुखोद्भव उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रे प्रथमाऽध्यायेभ्यो महाअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इति मण्डलस्योस्परि पुष्पांजलि)

द्वितीय अध्याय

औपशमिक-क्षायिकौ-भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्व –मौदयिक पारिणामिकौ च॥१॥

औपशमिक क्षायिक तथा, मिश्र औदयिक भाव।
पारिणामिकी जीव पे, पंच प्रकार प्रभाव॥१॥

ऊँ ह्रीं नामनयेन भावनयेन च सूत्रमिदं भावज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वि-नवाष्टा-दशैक-विंशति-त्रि-भेदा यथाक्रमम्॥२॥

दो, नव, अठदश, बीस इक, तथा तीन परकार।
क्रम से मिल त्रेपन बनें, निज में नेक निहार॥२॥

ऊँ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं भावभेदावधारणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक्त्व-चारित्रे॥३॥

औपशमिक के भेद दो, सम्यक् चारित धार।
भव सागर में भ्रमण से, नाव लगे उस पार॥३॥

ऊँ ह्रीं अनित्यअशुद्धपर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं औपशमिकभाव -

प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान-दर्शन-दान-लाभ-भोगोपभोग-वीर्याणि च॥४॥

दरश ज्ञान उपभोग सह, लाभ भोग बल दान ।
सम्यक चारित भाव नव, विधि क्षय से ही जान॥४॥

ॐ ह्रीं सादिनित्यपर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं क्षायिकभाव-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रि-त्रिपञ्चभेदाः सम्यक्त्व-चारित्र-संयमासंयमाश्च॥५॥

चार ज्ञान अज्ञान त्रय, -दर्श लब्धि हैं पाँच ।
सम्यक, चारित, देशव्रत-, क्षयोपशम से जाँच॥५॥

ॐ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं क्षयोपशमचारित्र-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गति-कषाय-लिङ्ग-मिथ्यादर्शना-ज्ञाना-संयता-सिद्ध-लेश्याश् चतुश्-चतुस्त्र्ये-कैकैकैक-षड्भेदाः॥६॥

गति-कषाय-चौ लिंग त्रय, षट्-लेश्या अज्ञान।
मिथ्यादर्शन, अविरती, असद्धित्व भी जान॥६॥

ॐ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं औदयिकभाव-विनाशनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीव-भव्या-भव्यत्वानि च॥७॥

जीवपना भव्यत्व वा, अभव्यत्व त्रय भाव।
पारिणामिकी हैं कहे, अन्य और भी भाव॥७॥

ॐ ह्रीं नित्य-शुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन अनित्य- अशुद्धपर्यायार्थिकनयेन च सूत्रमिदं शुद्धपरिणामिक भाव- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपयोगो लक्षणम्॥८॥

चेतन का परिणाम ही, उपयोगा कहलाय।
लक्षण यह है जीव का, जैन धरम बतलाय॥८॥

ॐ ह्रीं सद्‌भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं उपयोगमात्र प्राप्तये अर्घ्यं

निर्वपामीति स्वाहा।

स द्विविधोऽष्ट-चतुर्भेदः॥९॥

दरश-ज्ञान-उपयोग दो, उपयोगा के भेद।
चार-आठ उपभेद भी, क्रम से हो संवेद॥९॥

ॐ ह्रीं विशेष-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अभेदोपयोग-स्वभाव-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संसारिणो मुक्ताश्च॥१०॥

परिवर्तन जो पाँच हैं, उनमें भटके जोय।
संसारी वे जीव हैं, भेद-मुक्ति सह दोय॥१०॥

ॐ ह्रीं सामान्य-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं मुक्तिपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समनस्का-मनस्काः॥११॥

संसारी भी जीव सब, होते दोय प्रकार।
रहित मना कुछ मन सहित, करो सुधी स्वीकार॥११॥

ॐ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं अदृश्यज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संसारिणस्-त्रस-स्थावराः॥१२॥

भव में अटके जीव द्वय, विधि त्रस-थावर जान।
तीन लोक में भ्रमत हैं, गुरु की बात न मान॥१२॥

ॐ ह्रीं सामान्य-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं जीवविज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः॥१३॥

थावर जीव अनन्त हैं, उनमें पाँच प्रकार।
वायु-तेज-अप-हरित औ, क्षिति में दुःख अपार॥१३॥

ॐ ह्रीं विशेष-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं सूक्ष्मजीव-विज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः॥१४॥

दो-त्रय-चौ-पन-इन्दियाँ, त्रस के भेद जु चार।
दुर्लभता की ये कड़ी, कर्म बली निरवार॥१४॥

ऊँ ह्रीं विशेष-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं त्रसजीव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पञ्चेन्द्रियाणि॥१५॥

इन्द्रिय संख्या पाँच हैं, अधिक नहीं यह जान।
मन ईषत् इन्द्रिय कहा, फल हित की पहचान॥१५॥

ऊँ ह्रीं सामान्यविकल्प-सहितपर्यायार्थिकसूत्रमिदं अतीन्द्रिया-ज्ञान - प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्विविधानि॥१६॥

इन्द्रिय के दो भेद हैं, द्रव्य भाव से जान।
लक्षण आगे अब लिखूँ, सुनो-सुनो विज्ञान॥१६॥

ऊँ ह्रीं विशेष-विकल्प-सहित-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं द्रव्यभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्वृत्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम्॥१७॥

रचना औ उपकरण से, द्रव्येन्द्रिय दो भेद।
भीतर-बाहर जान लो, पुनः भेद पर - भेद॥१७॥

ऊँ ह्रीं विशेष-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं द्रव्येन्द्रिय-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम्॥१८॥

लब्धि और उपयोग मिल, बने पदारथ ज्ञान।
भावेन्द्रिय के भेद दो, यही ज्ञान की शान॥१८॥

ऊँ ह्रीं विशेष-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं भावेन्द्रिय-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्पर्शन-रसन-घ्राण चक्षुः- श्रोत्राणि॥१९॥

घ्राण चक्षु औ फास रस, श्रवण इन्द्रियाँ पाँच ।
विषयी के सुख द्वार ये, योगी करता जाँच॥१९॥

ॐ ह्रीं नामनयेन सूत्रमिदं इन्द्रियपूर्णक्षयोपशम-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण-शब्दास्-तदर्थाः॥२०॥

गन्ध रूप स्पर्श रस, शब्द विषय हैं जान ।
क्रम से इन्द्रिय के कहे, निज निज शक्ति प्रमाण॥१९॥

ॐ ह्रीं असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं इन्द्रियक्षयोपशम-वर्धनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुत-मनिन्द्रियस्य॥२१॥

मन का कारज मुख्य है, श्रुत वा श्रुत का ज्ञान ।
इस कारज में होत ना, अक्ष सहायी जान॥२१॥

ॐ ह्रीं असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं भावश्रुतज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वनस्पत्यन्ताना-मेकम्॥२२॥

सूक्ष्म तथा बादर कहे, इक इन्द्रिय के भेद ।
पृथिवी जल अग्नि-हरित, वायु भेद प्रभेद॥२२॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद्भूत- व्यवहारनयेन सूत्रमिदं इन्द्रियज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कृमि-पिपीलिका-भ्रमर-मनुष्यादीना-मेकैक-वृद्धानि॥२३॥

दो इन्द्रिय को आदि ले, पन इन्द्रिय के नाथ ।
कृमि, चींटी, भौंरा, मनुज, आदिक त्रस के साथ॥२३॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं त्रसजीवोदाहरण - प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संज्ञिनः समनस्काः॥२४॥

सहित मना जो जीव हैं, उनको संज्ञी मान ।
इन्द्रिय इक से चार तक, जीव बिना मन जान॥२४॥

ॐ ह्रीं भावनयेन सूत्रमिदं संज्ञिज्ञानावबोधाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विग्रहगतौ कर्मयोगः॥२५॥

दूजा तन पाने चले, तब गति-विग्रह होय।
कर्म योग संयोग से, पावत जस तस बोय॥२५॥

ऊँ ह्रीं कर्मसाक्षेप-असद्भूत व्यवहारनयेन सूत्रमिदं विग्रहगतिजीवावबोध-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुश्रेणि गतिः॥२६॥

ऊर्ध्व अधो तिर्यक् दिशा, में जो सरल कतार।
श्रेणी उसको कहत हैं, गति श्रेणी अनुसार॥२६॥

ऊँ ह्रीं नियतनयेन अनियतनयेन च सूत्रमिदं श्रेणीगतजीवावबोधप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अविग्रहा जीवस्य॥२७॥

सर्व अर्थ को सिद्धकर, सिद्धशिला जब जात ।
श्रेणी के अनु हो गती, बिना मोड़ ही जात॥२७॥

ऊँ ह्रीं स्वभावनयेन सूत्रमिदं मुक्तजीवगतिज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्थ्यः॥२८॥

मोड़ रहित या मोड़ सह, गति संसारी जीव ।
चार समय के पहिल ही, पुनः जन्म की नींव॥२८॥

ऊँ ह्रीं स्वभावनयेन सूत्रमिदं विग्रहगतिज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक समयाविग्रहा॥२९॥

बिना मोड़ की गती में, एक समय की बात।
काल कहा कालज्ञ ने, ऋजुगति जो कहलात॥२९॥

ऊँ ह्रीं नियतनयेन सूत्रमिदं अविग्रहगतिज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकं द्वौ त्रीन्-वा-नाहारकः॥३०॥

विग्रह गति में जीव के, नोकर्मा आहार ।
इक दो-त्रय के समय में, रुकता विविध प्रकार॥३०॥

ऊँ ह्रीं नियतनयेन सूत्रमिदं अनाहारकजीवज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्मूर्छन-गर्भोपपादा जन्म॥३१॥

विविध योनि में जन्म के, भेद तीन ही देख।
सम्मूर्छन गर्भज तथा, उपपादा में पेख॥३१॥

ऊँ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं जन्मभेदज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सचित्त -शीत-संवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्- तद्योनयः॥३२॥

सचित शीत संवृत इतर, करके इनका मेल।
नव योनी आवास हैं, मत इनमें अब खेल॥३२॥

ऊँ ह्रीं असद् भूत-व्यवहारनयेन विकल्पनयेन च सूत्रमिदं योनिज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जरायु-जाण्डज-पोतानां गर्भः॥३३॥

जेर अण्ड से पोत वा, होते जो उत्पाद ।
गर्भज के ये भेद सुन, कर अतीत को याद॥३३॥

ऊँ ह्रीं नियतनयेन सूत्रमिदंगर्भजन्मभेद-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव-नारकाणा-मुपपादः॥३४॥

देव नारकी जन्म का, थल उपपाद कहाय।
अल्प बहुत ही काल में, बल पूरण हो जाय॥३४॥

ऊँ ह्रीं नियतनयेन सूत्रमिदं उपपादजन्म-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शेषाणां सम्मूर्च्छनम्॥३५॥

शेष जीव का जन्म तो, सम्मूर्छन कहलाय।
विविध-विविध परमाणु मिल, लेते देह बनाय॥३५॥

ऊँ ह्रीं नियतनयेन सूत्रमिदं संमूर्छनजीव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

औदारिक-वैक्रियिकाहारक-तैजस-कार्मणानि-शरीराणि॥३६॥

औदारिक वैक्रिय तथा, आहारक वपु नाम।
तैजस कार्मण देह ये, पँच न निज के धाम॥३६॥

ॐ ह्रीं नामनयेन सूत्रमिदंशरीरज्ञान - प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परं परं सूक्ष्मम्॥३७॥

क्रम-क्रम से ये सूक्ष्म हैं, जानो पाँच शरीर।
चेतन के परिणाम से, पुद्गल की तस्वीर॥३७॥

ॐ ह्रीं अन्वय-सापेक्ष- सामान्यनयेन सूत्रमिदं सूक्ष्मशरीर- ज्ञानप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रदेशतोऽसंख्येय-गुणं प्राक्-तैजसात्॥३८॥

असंख्यात परमाणु का, बढ़ता बढ़ता ढेर ।
तैजस के पहले सभी, तन में इस क्रम फेर॥३८॥

ॐ ह्रीं विशेषनयेन सूत्रमिदं तनुप्रदेश-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनन्तगुणे परे॥३९॥

अन्तिम तन दो जो बचे, गुणे अनन्ते होत ।
पुदगल अणु का खेल यह, सबको दर्श न होत॥३९॥

ॐ ह्रीं विशेषनयेन सूत्रमिदं तेजसकार्मण-शरीरज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अप्रतीघाते॥४०॥

तीन लोक में रोक ना, चाहे वज्र कपाट ।
तेजस कार्मण देह की, यही अनोखी बात॥४०॥

ॐ ह्रीं स्वभावनयेन सूत्रमिदं सूक्ष्मशरीरशक्ति-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनादि-सम्बन्धे च॥४१॥

तैजस कार्मण देह का, भव में संग अनादि।
चाहे भवि या अभवि हो, प्रतिपल निर्जर सादि॥४१॥

ॐ ह्रीं अनादि-नित्य-पर्यायार्थिकनयेन अनित्य-अशुद्धपर्यायार्थिकनयेन च सूत्रमिदंसूक्ष्मसम्बन्ध-ज्ञान प्राप्ताये-अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वस्य॥४२॥

सब संसारी जीव के, दो तन प्रतिपल साथ।
तैजस कार्मण देह के, संग अन्य तन साथ॥४२॥

ॐ ह्रीं सर्वगतनयेन सूत्रमिदं सूक्ष्मशरीर-विज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तदादीनि भाज्यानि युगपदे-कस्मिन्ना-चतुर्थ्यः॥४३॥

दो शरीर को आदि ले, एक समय में चार ।
हो सकते हैं जीव के, तन भावा अनुसार॥४३॥

ॐ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं एकानेकशरीर-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निरुप-भोग-मन्त्यम्॥४४॥

अन्तिम कार्मण देह की, रही अनोखी बात।
इन्द्रिय के उपभोग बिन विग्रह गति में जात॥४४॥

ॐ ह्रीं अभोक्तानयेन सूत्रमिदं कार्मणदेह-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गर्भ-सम्मूर्छनजमाद्यम्॥४५॥

सम्मूर्छन या गर्भ से, जन्म लेय जो देह।
औदारिक कहते उसे, क्यों करता है नेह॥४५॥

ॐ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं औदारिकशरीर ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

औपपादिकं वैक्रियिकम्॥४६॥

देव नारकी जीव का, जन्म होय उपपाद ।
वैक्रिय तन संज्ञा उसे, देता जैनी वाद॥४६॥

ॐ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं वैक्रियिक -शरीर-

ज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लब्धि-प्रत्ययं च॥४७॥

तप तपता तपसी जबै, पाता ऋद्धि विशेष।
लब्धि से भी मिलता है, तन वैक्रिय का भेष॥४७॥

ऊँ ह्रीं लब्धिनयेन सूत्रमिदं विशिष्टवैक्रियिकशरीर-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तैजस-मपि॥४८॥

तैजस तन भी प्राप्त हो, लब्धि कारण जान।
दो प्रकार के भेद से, मुनि विशेष में जान॥४८॥

ऊँ ह्रीं लब्धिनयेन सूत्रमिदं तैजसशरीर-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभं विशुद्ध-मव्याघाति चाहारकं प्रमत्त-संयतस्यैव॥४९॥

शुभ विशुद्ध व्याघात बिन, शुभ लक्षण शुभ जात।
गुणस्थान छठवें मुनी, आहारक उपजात॥४९॥

ऊँ ह्रीं असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं आहारकशरीर-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नारक-सम्मूर्च्छिनो नपुंसकानि॥५०॥

नर-नारी से भी अधिक, कलुष नपुंसक भाव।
सम्मूर्छन औ नारकी, में इक पल न अभाव॥५०॥

ऊँ ह्रीं नियतनयेन सूत्रमिदं नपुंसकवेद-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न देवाः॥५१॥

दिव्य शरीरी दिव्य सुख, ऐसे देवी देव।
वेद नपुंसक बिन बने, द्वय वेदों में सेव॥५१॥

ऊँ ह्रीं नियतनयेन सूत्रमिदं देववेद- ज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शेषास्-त्रिवेदाः॥५२॥

जन्म गर्भजों की बची, शेष जीव जो राशि।
उनमें तीनों वेद हैं, द्रव्य भाव सह -वासि॥५२॥

ॐ ह्रीं नियतनयेन सूत्रमिदं त्रिवेद- ज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

औपपादिक-चरमोत्तम-देहा-संख्येय वर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः॥५३॥

चरमोत्तम तन देव औ, भोगभूमिया जीव।
तथा नारकी भोगते, पूरी आयु सदीव॥५३॥

ॐ ह्रीं कालनयेन सूत्रमिदं अकालमृत्यु-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(महार्घ्यं)

औपशमिक आदिक भावों का, संसारी-मुक्तिगत जीव
वेद, जन्मत्रय, योनि सभी का, बोध दिया अध्याय द्वितीय।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले, रुचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का, अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भव उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रे द्वितीयाऽध्यायेभ्यो महाअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इति मण्डलोस्परि पुष्पांजलिं.....)

तृतीय अध्याय

रत्न-शर्करा-बालुका-पङ्क-धूम-तमो-महातमःप्रभा -
भूमयो - घनाम्बु- वाताकाश-प्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः॥१॥

(चौपाई)

रत्न शर्करा बालुक पंका, धूम तमा तम-महा निकंपा।
सात भूमि के क्रम से नीचे, तिष्ठे अति बल वायु समूचे॥१॥

ॐ ह्रीं अस्तित्त्वनयेन सूत्रमिदं नरकसम्यग्ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तासु त्रिंशत्पञ्च-विंशति-पञ्चदश-दश-त्रि-पञ्चोनैक-नरक शत- सहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम्॥२॥

इन पृथ्वी में बिल की संख्या, तीस पचीसा पन-दश लक्खा।
दश त्रय औरहु पन कम लाखा, पाँच बिला सप्तम में भाखा॥२॥

ॐ ह्रीं संख्यानयेन सूत्रमिदं बिलसंख्या-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नारका नित्या-शुभतर-लेश्या-परिणाम-देह-वेदना-विक्रियाः॥३॥

इन नरकों में जो भी जावे, सदा अशुभतर लेश्या पावे।
तथा देह परिणाम रू पीड़ा,विक्रिय सब कुछ दुख की क्रीड़ा॥३॥

ॐ ह्रीं स्वभावनयेन सूत्रमिदं नरकवेदना-ज्ञान -प्राप्तये निर्वपामीति स्वाहा।

परस्परो-दीरित-दुःखाः॥४॥

आपस में अति दुख को देना,सुख इक क्षण का कभी मिले ना।
मार काट ही प्रतिपल कीना, और नहीं कुछ काज नवीना॥४॥

ॐ ह्रीं स्वभावनयेन सूत्रमिदं नारकदुःख -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संक्लिष्टासुरो-दीरित-दुःखाश्च प्राक्चतुर्थ्याः॥५॥

कलुष भाव के असुर सुरा भी, जाते चौथी भू पहिले ही।
भिड़ा-भिड़ा कर खूब लड़ाते, दुख महान गा गुरु थक जाते॥५॥

ॐ ह्रीं कलुषस्वभावनयेन सूत्रमिदं संक्लेशविनाशाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तेष्वेक-त्रि-सप्त-दश-सप्तदश-द्वाविंशति-त्रयस्त्रिंशत्सागरो-पमा सत्त्वानां परा स्थितिः॥६॥

अब उत्कृष्ट आयु बतलाते, क्रम से इक त्रय सप्त गिनाते ।
दस सतरह-सागर -बावीसा, अन्त भूमि सागर तैंतीसा॥६॥

ॐ ह्रीं नित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं नारकजीवायुर्ज्ञान - प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जम्बूद्वीप-लवणो-दादयः शुभ-नामानो द्वीप-समुद्राः॥७॥

मध्य लोक का वर्णन आता, जीव जहाँ से मुक्ती पाता।
द्वीप समुद्रों का बहु घेरा, सबको शुभ नामों से टेरा॥७॥

ॐ ह्रीं अनादि-नित्य-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं मध्यलोक-ज्ञान - प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्विर्द्वि -विष्कम्भाः पूर्व-पूर्वपरिक्षेपिणो वलया-कृतयः॥८॥

चूड़ी जैसी आकृति वाले, पहिले को दूजा घेरा ले।
दूनी दूनी परिधि बताते, असंख्यात संख्या जिन गाते॥८॥

ॐ ह्रीं अनादि-नित्य-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदंद्वीपसमुद्राकृति-ज्ञानप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन्मध्ये मेरु-नाभि-र्वृत्तो योजन-शत-सहस्र-विष्कम्भो जम्बूद्वीपः॥९॥

उन सबके बीचो-बीचों में, जम्बूद्वीप बना गोले में।
एक लाख योजन विस्तारा, मेरु नाभि सम शोभित न्यारा॥९॥

ॐ ह्रीं अनादि-नित्य-पर्यायार्थिकगणनानयेन सूत्रमिदं जम्बूद्वीपज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भरत-हैमवत-हरि-विदेह-रम्यक-हैरण्य-वैतारवत-वर्षाःक्षेत्राणि॥१०॥

भरत हैमवत हरी विदेहा, द्वीप-जम्बू के होय विभेदा।
रम्यक औ हैरण्यवतों से, ऐरावत सातों क्षेत्रों से॥१०॥

ॐ ह्रीं अनादि-नित्य-पर्यायार्थिकक्षेत्रनयेन सूत्रमिदं सप्तक्षेत्र-ज्ञानप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तद्-विभाजिनः पूर्वा-परायता हिमवन्-महाहिमवन्-निषध-नील रुक्मि-शिखरिणो वर्षधर-पर्वताः॥११॥

इन क्षेत्रों के बिच छह शैला, पूरब से पश्चिम तक फैला।
हिमवन तथा महा-हिमवन हैं, निषध नील रुक्मी शिखरी हैं।११॥

ॐ ह्रीं अनादि-नित्य-पर्यायार्थिकविभाजननयेन सूत्रमिदं षट्-पर्वतज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हेमार्जुन-तपनीय-वैडूर्य-रजत-हेममयाः॥१२॥

उन पर्वत के रंग मनहारी, क्रम से पीतरु श्वेत संवारी।
तप्त कनक औ कण्ठ मयूरा, श्वेत हेममय रंगा पूरा॥१२॥

ऊँ ह्वीं अनुपचरित-सद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं पर्वतवर्ण-ज्ञानप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणि-विचित्र पार्श्वा उपरि मूले च तुल्य-विस्ताराः॥१३॥

पर्वत के सब ही पखवाड़े, मणि-मणियों से खचि अति गाढ़े।
मूल मध्य ऊपर विस्तारा, लगे एक सम प्यारा -प्यारा॥१३॥

ऊँ ह्वीं अनादि-नित्य-पर्यायार्थिक विस्तारनयेन सूत्रमिदं पर्वतवर्णज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पद्म-महापद्म-तिगिञ्छ-केसरि-महापुण्डरीक-पुण्डरीका ह्रदास्तेषामुपरि॥१४॥

पद्म औ महापद्म तिगिंछा, बने सरोवर गिरि पे स्वच्छा।
केसरि महा पुण्डरीका भी, षट सर बने पुण्डरीका भी॥१४॥

ऊँ ह्वीं अनादि-नित्य-पर्यायार्थिकसंस्थाननयेन सूत्रमिदं पर्वतस्थसरोवरज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथमो योजन- सहस्रयामस्तदर्ध-विष्कम्भो ह्रदः॥१५॥

प्रथम सरोवर की लम्बाई, इक हजार योजन बतलाई ।
तथा पाँच सौ योजन चौड़ा, सोचो! माप नहीं यह थोड़ा॥१५॥

ऊँ ह्वीं अनादि-नित्य-पर्यायार्थिक आयामनयेन सूत्रमिदं ह्रदायाम -ज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशयोजनावगाहः॥१६॥

अब इसकी गहराई नापें, दस हजार योजन सीमा पे।
अब तक काल अनन्ता बीता, भो! आश्चर्य नहीं यह रीता॥१६॥

ऊँ ह्वीं अनादि-नित्य-पर्यायार्थिक -अवगाहनयेन सूत्रमिदं ह्रदावगाहज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन्मध्ये योजनं पुष्करम्॥१७॥

उस ह्रद में इक कमल बना है, इक योजन लम्बा चौड़ा है।

खिली पांखुड़ी चारों ओरा, पृथिवी कायिक है अति गोरा॥१७॥

ऊँ ह्रीं अनादि-नित्य-पर्यायार्थिकसंस्थितिनयेन सूत्रमिदं अकृत्रिम पुष्कर- ज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तद्-द्विगुण-द्विगुणा ह्रदाः पुष्काराणि च॥१८॥

अन गिरि पर भी बने हुए हैं, दूनी-दूनी माप लिये हैं।
पद्म सरोवर शोभित होते, ना मुरझाते-मैले होते॥१८॥

ऊँ ह्रीं गणनानयेन सूत्रमिदं अन्यपुष्करादिमाप- ज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन्-निवासिन्यो देव्यः श्री-ही-धृति-कीर्ति-बुद्धि-लक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिक-परिषत्काः॥१९॥

श्री ही धृति औ कीर्ती देवी, बुद्धि लक्ष्मी सुर से अन सेवी।
सामानिक परिषद सुर संगा, पल्य आयु तक तन मन चंगा।१९॥

ऊँ ह्रीं कालनयेन सूत्रमिदं कुलाचलदेवी-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गङ्गा-सिन्धु-रोहिद्रोहि-तास्या-हरिद्धरि-कान्ता-सीता-सीतोदानारी-नरकान्ता-सुवर्ण-रूप्यकूला-रक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः॥२०॥

क्षेत्र बीच से बहने वाली, गंगा सिन्धु महा जल वाली।
अरु रोहित रोहित आस्या भी, हरिता, हरिकांता नदियाँ भी॥
सीता सीतोदा औ नारी, नरकान्ता नद भी जलधारी ।
सुवर्ण रूप्यकला हैं भातीं, रक्ता रक्तोदा भी जाती॥ २०॥

ऊँ ह्रीं स्वभावनयेन सूत्रमिदं अकृत्रिमनदी-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः॥२१॥

एक क्षेत्र बिच नदियाँ दो दो, अलग अलग दिश बहती हो!हो!।
पहिल पहिल की पूरब जाती, जाके सागर में मिल जाती॥२१॥

ऊँ ह्रीं वक्रस्वभावनयेन सूत्रमिदं पूर्वनदीगति-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शेषास्त्व-परगाः॥२२॥

नद जोड़े में पीछे लेखा, नक्से में वो नाम जु देखा।
ठीक सूत्र के ही अनुसारा, सबका सागर सुखद सहारा॥२२॥

ऊँ ह्रीं वनस्वभावनयेन सूत्रमिदं अपरनदीगति-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्दश-नदी-सहस्र-परिवृता गङ्गा-सिन्ध्वादयो नद्यः॥२३॥

गंगा सिन्धु का परिवार, चौदह तीन बिन्दु नद न्यारा।
दूना-दूना आगे-आगे प्रति जोड़ा संग घेरे भागे॥२३॥

ऊँ ह्रीं स्वभावगणनानयेन सूत्रमिदं परिवारनदी-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भरतः षड् विंशति-पञ्चयोजन-शत-विस्तारः
षट्चैकोन-विंशति भागा योजनस्य॥२४॥

भरत क्षेत्र की नाप बताते, दक्षिण से उत्तर तक पाते।
पाँच शतक योजन छब्बीसा,अधिक कहा छह भाग उनीसा।२४॥

ऊँ ह्रीं क्षेत्रगणनानयेन सूत्रमिदं भरतक्षेत्रप्रमाण-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तद्द्विगुण-द्विगुण-विस्तारा वर्षधर -वर्षा विदेहान्ता॥२५॥

भरत क्षेत्र से आगे जो हैं, पर्वत-क्षेत्र सभी मन मोहे ।
द्विगुण द्विगुण विस्तार बढ़ाओ, विदेह क्षेत्र तक जा रुक जाओ॥२५॥

ऊँ ह्रीं स्वभावनयेन सूत्रमिदं भरतक्षेत्रप्रमाण-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरा दक्षिण-तुल्याः॥२६॥

उसके आगे पर्वत क्षेत्रा, दक्षिण दिश सम वर्णन लेता।
कमल-सरोवर-नद की माप, उस क्रम से ली जाती नाप॥२६॥

ऊँ ह्रीं क्षेत्र-साक्षेप-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं उत्तरदिशाक्षेत्रमाप-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भरतैरावतयोर्वृद्धि-ह्रासौ षट्समयाभ्या-

मुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम्॥२७॥

ऊँचाई आयू उपभोग, बढ़े घटे षट - काल संयोग।
भरत और ऐरावत में ही, उत्सर्पिणि अवसर्पिणि में ही॥२७॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं षट्समय - ज्ञानप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः॥२८॥

अन्य सभी क्षेत्रों में जानो, हीनाधिक उनमें ना मानो।
रहे व्यवस्था एक समाना, आयु भोगकर काल गँवा ना॥२८॥

ॐ ह्रीं नियतक्षेत्रनयेन सूत्रमिदं अवस्थितक्षेत्र - ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक-द्वि-त्रि-पल्योपम-स्थितयो हैम-वतक-
हारि-वर्षक-दैव कुरवकाः॥२९॥

हैमवतक हरि देवकु रु में, नर-नारी-पशु मिल आपस में ।
इक द्वय तीन पल्य क्रम आयू,भोगभूमि में रहे बिता यूँ॥२९॥

ॐ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं भोगभूमिआयुः प्रमा-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तथोत्तराः॥३०॥

रम्यक औ हेरण्यवतक में, उत्तरकुरु सह उत्तर दिश में।
दक्षिण दिश के मानुष जैसी, आयू भोगभूमि की वैसी॥३०॥

ॐ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं उत्तरदिशा-भोगभूमि आयुःप्रमा-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विदेहेषु संख्येय-कालाः॥३१॥

क्षेत्र विदेहों में षटकाजा, खुला मुक्ति का द्वार वहाँ जा।
पूर्व कोटि आयू उत्कृष्ट, अन्तर्मुहूरत है निकृष्ट॥३१॥

ॐ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं विदेहक्षेत्र-जीवायुर्ज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवति-शत-भागः॥३२॥

पहिले जो परिमाप बताया, पुनः अलग विध से समझाया।
द्वीप जम्बू से भरत क्षेत्र का, भाग नवतिशत लख योजन का॥३२॥

ॐ ह्रीं नियतनयेन सूत्रमिदं जम्बूद्वीपमाप-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्विर्धातकी-खण्डे॥३३॥

द्वीप दूसरा बहुत बड़ा है, गिरि क्षेत्रों से खचा पड़ा है।
खण्ड धातकी शुभ संज्ञा है, क्षेत्रादिक दूनी संख्या है॥३३॥

ॐ ह्रीं नियतसंख्यानयेन सूत्रमिदं धातकीखण्डद्वीप-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्करार्द्धे च॥३४॥

तीजा पुष्कर द्वीप बताया, आधा ढाई द्वीप में पाया।
क्षेत्र, नदी, पर्वत, ह्द सारे, खण्ड धातकी द्वीप समा रे॥३४॥

ॐ ह्रीं नियतसंस्थाननयेन सूत्रमिदं पुष्करार्द्धद्वीप -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राङ्-मानुषोत्तरान्मनुष्याः॥३५॥

नर खेचर मुनि ऋद्धीधारी, द्वीप अढाई सीमा सारी।
मानुष -उत्तर शैल पड़ा है, मानो रोके शेर खड़ा है॥३५॥

ॐ ह्रीं स्वभावनयेन सूत्रमिदं मानुषोत्तरपर्वत-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आर्या म्लेच्छाश्च॥३६॥

मानुष के दो भेद बताये, कुछ आर्या कुछ म्लेच्छ कहाये।
अशन वसन सब बिन संस्कारा, म्लेच्छ कहे बहुविध हैं आर्या॥३६॥

ॐ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं मनुष्यभेद- ज्ञान - प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भरतैरा-वत-विदेहाः कर्म-भूमयोऽन्यत्र देव-कुरूत्तर कुरुभ्यः॥३७॥

भरतैरावत-पाँच-विदेहा, पन्द्रह कर्मभूमि के गेहा।
पाप-पुण्य अति कर सकते हैं, औ शिव गति भी पा सकते हैं॥३७॥

ऊँ ह्रीं विशेषनयेन सूत्रमिदं कर्मभूमि -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नृस्थिती परावरे त्रिपल्यो-पमान्तर्मुहूर्ते॥३८॥

तीन पल्य नर आयु महा है, अन्तरमुहुरत जघन तथा है।
भोग-विषय सब आयू भोगी, धन्य ! धन्य! जो बन गये योगी॥३९॥

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं उत्कृष्ट जघन्ययार्यु-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिर्यग्योनिजानां च॥३९॥

पशु गति में आयू भी जानो, नर समान उनमें भी मानो।
उमा स्वामि गुरु का वर्णन है,फल इसका तजना जगभ्रम है।३९।

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं तिर्यग्योनिगति-आयुर्ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(महार्घ्य)

अधोलोक के नरक बिलों की, द्वीप समुद्रों की संख्या
परिवर्तन तन कालचक्र का, तिर्यग् जग की भी संज्ञा।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रुचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥

ऊँ ह्रीं जिनमुखोद्भव - उमास्वामिविरचित - तत्त्वार्थसूत्रे तृतीयाऽध्यायेभ्यो महाअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इति मण्डलोस्परि पुष्पांजलिं .....)

चतुर्थ अध्याय

देवाश्चतुर्णिकायाः॥1॥

(पद्धरी)

तन सप्त धातु मल रहित धार, सेवत इन्द्रिय मन विषय क्षार।
ते अमर देव के चतु निकाय,पूजत नित जिनवर पद्म पाय॥1॥

ऊँ ह्रीं अस्तित्त्वनयेन विकल्पनयेन च सूत्रमिदं देवनिकायज्ञान-प्राप्तये

अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आदितस् -त्रिषु पीतान्त-लेश्याः॥२॥

त्रय भवन वाण ज्योतिषी देव, चौ आदिक की लेश्या रखेव।
हैं कृष्ण नील कापोत पीत, पर्याप्त दशा में एक पीत॥२॥

ऊँ ह्रीं अशुद्ध-निश्चयनयेन सूत्रमिदं देवलेश्या-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशाष्ट-पञ्च-द्वादश-विकल्पा: कल्पोप-पन्न-पर्यन्ताः॥३॥

दश आठ पाँच बारहा भेद, भावन व्यन्तर ज्योतिष प्रभेद ।
कल्पोपपन्न वासी सुदेव, मानें नित इन्द्राज्ञा स्वयमेव॥३॥

ऊँ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं देवनिकायभेद - ज्ञान - प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्र-सामानिक-त्रायस्त्रिंश-पारिषदात्मरक्ष-लोक-पाला-नीक प्रकीर्णकाभियोग्य-किल्विषिकाश्चैकशः॥४॥

परिवार इन्द्र का अति विशाल,दश-दश विध सुर तन मन रसाल
सामानिक त्रायस्त्रिशं साथ, पारीषद आतमरक्ष साथ॥४॥
सह लोकपाल सैनिक अनीक, अभियोग प्रकीर्णक प्रजा ठीक।
किल्विषिक देव हैं दुखी देव, अपमान सहें कुछ ना कहेव॥४ब॥

ऊँ ह्रीं विशेष-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं देवपरिवार -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रायस्त्रिंशलोक-पाल-वर्ज्या व्यन्तर- ज्योतिष्काः॥५॥

त्रायस्त्रिंशा औ लोकपाल, का नियम रखो यह नित्य ख्याल।
व्यन्तर ज्योतिष में नहीं होत,सुर शासन चलता बिना वोट॥५॥

ऊँ ह्रीं विशेषनयेन सूत्रमिदं विशिष्टदेव -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्वयोर्द्वीन्द्राः॥६॥

जो भवनवास व्यन्तर निकाय, दो-दो इन्द्रों का नियम थाय ।
ये नियम अनादि अटूट जान, सब सुर के मर्यादित सुथान॥६॥

ॐ ह्रीं नियतसंख्यानयेन सूत्रमिदं देवेन्द्र-ज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काय-प्रवीचारा आ ऐशानात्॥७॥

तन वीर्य रहित वैक्रियक धार, पर विविध-विविध ढंग प्रवीचार।
एशान स्वर्ग तक सभी देव, -देवी शरीर मैथुन कुसेव॥७॥

ॐ ह्रीं सामान्यभोक्तानयेन सूत्रमिदं देवसुख-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शेषाः स्पर्श-रूप -शब्द-मनः प्रवीचाराः॥८॥

कुछ का मन तन छू पुष्ट होत, कुछ रूप रंग लख तुष्ट होत।
सुन मधुर गीत,कुछ मन विचार, देवों में इस विधि प्रवीचार॥८॥

ॐ ह्रीं विशेषभोक्तानयेन सूत्रमिदं अन्यवैमानिक सुख ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परेऽप्रवीचाराः॥९॥

आगे जो हैं अहमिन्द्र देव, करते नहिं मैथुन औ कुसेव।
नहिं काम भोग कामिनी लोग,सुर सुख का कारण पुण्य योग।९।

ॐ ह्रीं अभोक्ताननयेन सूत्रमिदं अप्रवीचारदेव- ज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवन-वासिनोऽसुरनाग-विद्युत्सुपर्णाग्नि-
वातस्तनितोदधि-द्वीप-दिक्कुमाराः॥१०॥

भावन सुर के दश हैं प्रकार, हैं असुर नाग विद्युत कुमार।
सुपरण अग्नि स्तनित वात, दिक द्वीप कुमारु-दग्धि कहात।१०।

ॐ ह्रीं नामनयेन अस्तित्वनयेन च सूत्रमिदं भवनवासिदेव- ज्ञानप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यन्तराः किन्नर-किम्पुरूष-महोरग-गन्धर्व-
यक्ष-राक्षस-भूत-पिशाचाः॥११॥

किन्नर किम्पुरुष महोरगादि, गन्धर्व यक्ष राक्षस प्रजाति।
ये भूत पिशाच जु अष्ट भेद,व्यन्तर सुर जानो बिना खेद॥११॥

ॐ ह्रीं नामनयेन अस्तित्वनयेन च सूत्रमिदं व्यन्तरदेव - ज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्योतिष्काः सूर्या-चन्द्र-मसौ ग्रह-नक्षत्र-प्रकीर्णक-तार-काश्च॥१२॥

यह सूर्य चन्द्रमा ग्रह नक्षत्र, तारे फैले जो सर्वयत्र।
वे सब ज्योतिषकी हैं विमान,भ्रम छोड़ो सरवग बात मान॥१२॥

ॐ ह्रीं नामनयेन अस्तित्वनयेन च सूत्रमिदं ज्योतिष्कदेव - ज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु-प्रदक्षिणा नित्य-गतयो नृलोके॥१३॥

नर लोक ज्योतिषी सुर विहार, करते रहते बिन थके हार।
मेरु गिरि के चारों ही ओर, परिवार सहित घूमत न छोर॥३॥

ॐ ह्रीं स्वभावगतिनयेन सूत्रमिदं ज्योतिष्कदेवभ्रमण- ज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्कृतः काल-विभागः॥१४॥

चलते स्वभाव से स्वतः चाल, इस कारण भेद विभाग काल।
यह जिनवर वाणी सत्य जानि,परमागम की यह बात मानि।१४।

ॐ ह्रीं क्रियानयेन सूत्रमिदं कालविभाग- ज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहिरवस्थिताः॥१५॥

नर लोक बाह्य भी रहत देव, स्थित जो रहते हैं स्वयमेव ।
ज्योतिष मण्डल सब मध्य लोक,में रहते गिनती अती थोक।१५।

ॐ ह्रीं नियतनयेन सूत्रमिदं अवस्थितज्योतिर्मण्डल - ज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैमानिकाः॥१६॥

चौथा निकाय वर्णन विशेष, सुनलो ! गुरु से कुछ भी न शेष।
शुभ कार्य पुण्य कर कर्म बोय,तस फल सुर वैमानिकी होय।१६।

ॐ ह्रीं निर्देशनयेन सूत्रमिदं वैमानिकदेव- ज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पोपपन्नाः कल्पा-तीताश्च॥१७॥

इन देवों के मुनि भेद गात, सह कल्प-कल्प बिन से बतात।
सौलह स्वर्गों तक कल्प होत,आगे नहिं कल्पित कल्प होत।१७।

ऊँ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं वैमानिकदेवविकल्प-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपर्युपरि॥१८॥

इक के सिर ऊपर एक जान, बिखरे बिखरे नहिं ये विमान।
मणिरत्न खचित जिनचैत्य युक्त,पूजित सुर पर नित भोग युक्त।18।

ऊँ ह्रीं नियतव्यवस्थानयेन सूत्रमिदं वैमानिकदेवविमानव्यवस्था-ज्ञानप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सौधर्मैशान-सानत्कुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म-ब्रह्मोत्तरलान्तव-कापिष्ठशुक्र-महाशुक्र-शतार-सहस्रारेष्वानत- प्राणतयो-रारणा-च्युतयो र्नवसु ग्रैवेयकेषु विजय-वैजयन्त-जयन्ता-परा-जितेषु सर्वार्थ-सिद्धौ च॥१९॥

सौधर्म एशान सानत्कुमार, माहेन्द्र नाम इस विधि प्रकार।
हैं ब्रह्म ब्रह्मोत्तर लान्तवेन्द्र, कापिष्ठ शुक्र महाशुक्र इन्द्र॥
आगे सतार फिर सहस्त्रार, आनत प्राणत आरण कतार।
अच्युत ग्रीवक अनुदिश महन्त, ता ऊपर विजया वैजयन्त॥
फिर हैं जयन्त अपराजितेश, सरवारथ सिद्धि अन्तिम सुदेश।
सब दिव्य देह युत अवधिज्ञान,गुण अष्ट तुष्ट शोभित महान।19।

ऊँ ह्रीं स्वभावनयेन सूत्रमिदं वैमानिकदेवसंज्ञा-ज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्थिति-प्रभाव-सुख-द्युति-लेश्या-विशुद्धीन्द्रिया - वधिविषयतोऽधिकाः॥२०॥

आयू प्रभाव आनन्द कान्ति, इन्द्रिय विषया मन चमन शान्ति।
लेश्या विशुद्धि औ अवधिज्ञान,ये ऊपर ऊपर अधिक जान॥२०॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं वैमानिकदेव -

गुणविशेष-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गति-शरीर-परिग्रहाभि-मानतो हीनाः॥२१॥

गति काया का आयाम संग, अभिमान कषायें मन्द मन्द।
आगे नाकों में हीन हीन, कारण इसका अघ छीन छीन॥२१।

ॐ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिंद वैमानिकदेव-गुणविशिष्ट-ज्ञान- प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पीत-पद्म -शुक्ल-लेश्या द्वि-त्रि शेषेषु॥२२॥

पहिले दो युगलों में है पीत, फिर तीन युगल में पदम पीति ।
आगे लेश्या है एक शुक्ल, यह कथन अपेक्षा गौण मूल॥२२॥

ॐ ह्रीं नियताशुद्धभावनयेन सूत्रमिदं वैमानिकदेव- लेश्या- ज्ञानप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः॥२३॥

ग्रैवेयिक से पहले विकल्प, उन स्वर्गों की संज्ञा है कल्प।
तातै आगे स्वर्गा सुदेव, अहमिन्द्र स्वयं आज्ञा न सेव॥२३॥

ॐ ह्रीं स्थापनानयेन सूत्रमिदं कल्पवासिदेव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

ब्रह्म-लोकालया लौकांतिकाः॥२४॥

पंचम नाका के अन्त मांहि, आलय अलगाव वहाँ रहाहि।
भावी भव इक धर मुक्ति पाय, तारौं सुर लौकांतिक कहाय।२४।

ॐ ह्रीं नियतक्षेत्रनयेन सूत्रमिदं लौकान्तिकदेव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सारस्वता-दित्य-वह्न्यरुण-गर्दतोय-
तुषिताव्या-बाधा-रिष्टाश्च॥२५॥

ये सभी वहाँ वैराग्य पूर्ण, सारस्वत आदित वह्नि अरुण ।
औ गर्दतोय शुभ तुषित नाम, अव्याबाधारिष्टा प्रधान॥२५॥

ॐ ह्रीं नामनयेन विकल्पनयेन च सूत्रमिदं लौकान्तिकदेव-भेद-ज्ञानप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयादिषु द्विचरमाः॥२६॥

विजयादिवास अनुदिशी देह, अधिकाधिक द्वयभव भ्रमण लेह।
तातै द्वि चरमा कहे जात, दुख दावानल से छूट जात॥२६॥

ऊँ ह्रीं विशेषनयेन सूत्रमिदं लौकान्तिकदेव -भेदज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

औप-पादिक-मनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः॥२७॥

नर नाक नरक में जनित जीव, अन शेष तिर्यंचा योनि जीव।
त्रय लोक सदन वासी सदैव, ताही ६ सूत्र नया कहैव॥२७॥

ऊँ ह्रीं विशेषनयेन सूत्रमिदं तिर्यग्योनिगतजीव-स्थानविशेष - ज्ञानप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्थिति-रसुर-नाग-सुपर्ण-द्वीप-शेषाणां सागरोपम-त्रिपल्योपमार्द्ध- हीन -मिताः॥२८॥

आयू असुरा नागा सुपर्ण, सागर त्रय-ढाई-पल्य मर्ण ।
सुर-द्वीप धरें दो पल्य आयु, औ डेढ़ पल्य अन कुंवर आयु।२८।

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं भवनवासिदेवा-युर्ज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सौधर्मेशानयोः सागरोपमेऽधिके॥२९॥

सौधर्म ऐशानी नाक देव, में आयु कहें देवाधिदेव।
सागर द्वय में कुछ बढत खास, बारह स्वर्गो तक नियम भास।29।

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं आद्यद्वय-कल्पायुर्ज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सानत्कुमार-माहेन्द्रयोः सप्त॥३०॥

सानत्कुमार माहेन्द्र नाक, नाकावासी आयू विपाक।
कुछ अधिक सप्त सागर प्रमाण,बतलाते हैं सब सुधीमान॥३०॥

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं अग्रदेवायुर्ज्ञान - प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रि-सप्त-नवैका-दश-त्रयोदश-पञ्चदशभिरधिकानि तु॥३१॥

फिर तीन सात नव दशा-एक, तेरह पन-दश से अधिक देख।
षट कल्प युगल सुर अवधि जान,बाईस उदधि सोलवें थान।३१।

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं अन्यदेवायुर्ज्ञान - प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आरणाच्युता-दूर्ध्व-मेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु
विजयादिषु सवार्थसिद्धौ च॥३२॥

इक-इक सागर की बढ़त देख, नव ग्रीवक तक चल रूको पेख।
अनुदिश नव में आयू बतात, क्रम में इक सागर अधिक पात।32।
विजयादि वास की सुर समाज, में इक सागर औ अधिक छाज।
पर सरवारथ सिद्धि सुथान, त्यतीस उदधि उत्कृष्ट जान॥32ब॥

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं अवशिष्ट-देवायुर्ज्ञान - प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपरा पल्योपममधिकम्॥३३॥

आयू जघन्य अब कही जाय, सौधर्मे और ईशान माय ।
इक पल्य अधिक कुछ और जान, यह समय बताते समयवान।33।

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं स्वर्गदेव-जघन्यायुर्ज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

परतः परतः पूर्वापूर्वानन्तरा॥३४॥

नीचे स्वर्गो की उच्च आयु, ऊपर जघन्य वह ही कहा यु ।
हो ंकल्पवासि, कल्पाअतीत, यह नियम क्रमिक क्रम से सटीक॥34॥

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं अन्यदेव-जघन्यायुर्ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नारकाणां च द्वितीयादिषु॥३५॥

नारक जीवो ंमें जघन काल, पाने की इस विधि ही है चाल।
लिख दी पहिले आयूत्कर्ष, गुरु हैं धी धारी दूरदर्श॥३५॥

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं नारक-जघन्यायुर्ज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दश-वर्ष- सहस्राणि प्रथमायाम्॥३६॥

पहली पृथिवी धम्मा विशाल, तामें आयू का जघन काल ।
है दश हजार तक वर्ष पार, करना दुःसह करनी विचार॥३६॥

ॐ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं प्रथमनरक-जघन्यायुर्ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवनेषु च॥३७॥

भवन वासी सुर हैं समस्त, धर जघन आयु रह मौज मस्त।
वर्षों हजार दश को गुजार, फिर सहें जनम दुख क्षार-क्षार॥३७॥

ॐ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं भवनवासिदेव-जघन्यायुर्ज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यन्तराणां च॥३८॥

है यहाँ वहाँ आवास थान, खेलें घूमें रंजायमान।
इक शून्य चार वर्षा प्रमान, आयू जघन्य सुर-बान जान॥३८॥

ॐ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं व्यन्तरदेव-जघन्यायुर्ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परा पल्योपम-मधिकम्॥३९॥

उत्कृष्ट आयु करते बखान, व्यन्तर देवों की कही जान।
इकपल्य आयुकुछ अधिक जोय, बिन संयम के सब समय खोय।39।

ॐ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं व्यन्तरदेवोत्कृष्टायुर्ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्योतिष्काणां च॥४०॥

चमके नभ में जो शशि विमान, वा रवि तारे तारक पिछान ।
इक पल्य आयु कुछ अधिक धार, बीते बिन संयम कर विचार॥40॥

ॐ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं ज्योतिष्क-देवोत्कृष्टायुर्ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तदष्ट-भागोऽपरा॥४१॥

कम से कम कितनी आयु पाय, तारा मण्डल नभ में दिपाय।

इक पल्य समय का आठ भाग, बीते भोगों में पाग पाग॥४१॥

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं ज्योतिष्कदेव-जघन्यायुर्ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लौकान्तिकाना-मष्टौ सागरो-पमाणि सर्वेषाम्॥४२॥

शुभ लेश्या विषयनि तें विरक्त, महिमा महती जिनपदासक्त।
लौकान्तिक सागर आठ आयु, देवों में देव ऋषी कहायु॥४२॥

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं लौकान्तिक-देवायुर्ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(महार्घ्य)

रहे चार विध देवसमूह, उनकी संख्या आयूवास
सुख इन्द्रिय अवधिज्ञान यदि, चौथा पाठ रहा मन पास।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रुचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥

ऊँ ह्रीं जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रे चतुर्थाऽध्यायेभ्यो महाअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इति मण्डलोस्परि पुष्पांजलिं .....)

पंचम अध्याय

अजीव-काया धर्मा-धर्मा-काश-पुद्गलाः॥१॥

(चाल)

नभ धर्म अधर्म कहे हैं, पुद्गल संग द्रव्य रहे हैं।
चारों अजीव औ काया इसलिए सूत्र यह आया॥१॥

ऊँ ह्रीं नित्य-द्रव्यार्थिकनयेन सूत्रमिदं अजीवकाय-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्याणि॥२॥

पर्यायों से जुड़ आया, या पर्यायों को पाया।
ऐसे धर्मादिक जो हैं, वे द्रव्य विलक्षण सो हैं॥२॥

ऊँ ह्रीं सामान्यसंग्रहनयेन सूत्रमिदं द्रव्य-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवाश्च॥३॥

हैं जीव बहुत से द्रव्य, कुछ हैं अभव्य कुछ भव्य।
अनमत की कुमति भगाव, दे जोर अलग तस गाव॥३॥

ऊँ ह्रीं विशेषसंग्रहनयेन सूत्रमिदं जीवद्रव्य -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नित्या-वस्थितान्यरूपाणि॥४॥

नहिं नाश द्रव्य ये होते, बिन रूप अमूरत होते ।
संख्या का नहिं व्यभिचारा, गुण ये होना अनिवारा॥४॥

ऊँ ह्रीं द्रव्यस्वभाव-प्ररूपकनयेन सूत्रमिदं द्रव्यस्वभाव -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूपिणः पुद्गलाः॥५॥

पुद्गल में गुण कुछ न्यारा, कारण हैं नैक प्रकारा।
तातैं ये रूपी कहायें, रस आदि भी पाये जायें॥५॥

ऊँ ह्रीं विशेषद्रव्यस्वभाव -प्ररूपकनयेन सूत्रमिदं पुद्गलद्रव्यस्वभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आ आकाशा-देक-द्रव्याणि॥६॥।

नभ धर्म अधर्म अखण्ड, हैं एक द्रव्य नहिं खण्ड।
इन बिन अन द्रव्य अनेक, संख्या की अपेक्षा देख॥६॥

ऊँ ह्रीं अखण्डनयेन सूत्रमिदं अखण्डद्रव्य -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्क्रियाणि च॥७॥

इक ठान से अन्य स्थान, नहिं जाते द्रव्य ये मान ।
तातैं निष्क्रिय कहलाते, निज में परिवर्तन पाते॥७॥

ऊँ ह्रीं अक्रियानयेन सूत्रमिदं निष्क्रियद्रव्य -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

असंख्येयाः प्रदेशा धर्मा-धर्मैक-जीवानाम्॥८॥

इक जीव प्रदेश जु होते, संख्यात अनन्त न होते ।
सब धर्म अधर्म सु द्रव्य, असंख्यात प्रदेशी जीव्य॥८॥

ऊँ ह्रीं शुद्ध-सद्भत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं असंख्येप्रदेशद्रव्य -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकाशस्या-नन्ताः॥९॥

जितने में अणू समाता, नभ देश प्रदेश कहाता।
आकाश प्रदेश अनन्त, जानो कहते भगवन्त॥९॥

ऊँ ह्रीं शुद्ध-सद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अनन्तप्रदेशद्रव्य -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संख्येया-संख्ये-याश्च पुद्गलानाम्॥१०॥

पुद्गल प्रदेश त्रय विध के, संख्यात असंख्य अणू के।
हैं अनन्त प्रदेशी पुद्गल, स्कन्धों का इस विधि है बल॥१०॥

ऊँ ह्रीं स्वजाति-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं पुद्गलप्रदेशद्रव्य -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाणोः॥११॥

पुद्गल का सूक्ष्म जु भेद, अणु है नहिं जस अनभेद।
उसमें नहिं होत प्रदेश, कारण वह स्वयं प्रदेश॥

ऊँ ह्रीं शुद्ध-सद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अणुद्रव्यप्रदेश -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोका-काशेऽवगाहः॥१२॥

धर्मादिक जो सब द्रव्य, आवास रहे ज्ञातव्य ।
लोकाकाशा आधार, अवगाह इसी में सार॥१२॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं लोकाकाश -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

धर्मा-धर्मयोः कृत्स्ने॥१३॥

तिल में रहता ज्यों तैला, धर्माऽधर्मा त्यों फैला।

लोकाकाशा तक जानो, दोनों द्रव का परिमाणो॥१३॥

ऊँ ह्रीं सामान्यनयेन सूत्रमिदं धर्मादिद्रव्यस्वभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक-प्रदेशा-दिषु भाज्यः पुद्गलानाम्॥१४॥

संख्यात असंख्यातों में, वा एक प्रदेशों भी में ।

नन्ते पुद्गल स्कन्ध, अवगाह स्वभाव प्रबन्ध॥१४॥

ऊँ ह्रीं विशेषनयेन सूत्रमिदं पुद्गलावगाहशक्ति -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

असंख्येय-भागादिषु जीवानाम्॥१५॥

इक भाग असंख्यातै से, बढ़-बढ़ के असंख्याते में।

रहते इक जीव प्रदेश, सब करें वास निज देश॥१५॥

ऊँ ह्रीं विशेषनयेन सूत्रमिदं जीवद्रव्यावगाहनशक्ति -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रदेश-संहार-विसर्पाभ्यां प्रदीपवत्॥१६॥

ऐसा क्यों क्या कारण है, उसका ही उदाहरण है।

संकोच और विस्तार, जैसा दीपक आधार॥ १६॥

ऊँ ह्रीं सामान्यनयेन विशेषनयेन च सूत्रमिदं जीवद्रव्यसंकोच-विस्तार -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गति-स्थित्युपग्रहौ धर्मा-धर्मयो-रुपकारः॥१७॥

है धर्म द्रव्य उपकार, गति में देता सहकार ।

जीवों पुद्गल की थिति में, है द्रव्य अधर्म उपकृति में॥१७॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं धर्मादिद्रव्योपकार -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकाशस्या -वगाहः॥१८॥

सब द्रव्यों को अवकाशा, देता उपग्रह आकाशा।

अवगाह इसी में सारा, पर लक्षण धारे न्यारा॥१८॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं आकाशद्रव्य-

वगाहशक्ति -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शरीर-वाङ्मनः प्राणा-पानाः पुद्गलानाम्॥१९॥

तन मन वचनों का होना, उच्छवास-श्वास का लेना।
जीवों के प्रति उपकार, पुदगल का सब आभार॥१९॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं पुदगल-द्रव्योपकार -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुख-दुःख-जीवित-मरणो-पग्रहाश्च॥२०॥

सुख दुख जीवा जो पाते, जीवन वा मरण लहाते।
पुदगल कृत हैं उपकार, जानो अन विविध प्रकार॥२०॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं पुदगलद्रव्योपकारविशेष-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परस्परो-पग्रहो जीवानाम्॥२१॥

चाहे गुरु शिष्य हो भाई, या मालिक नौकर-दाई।
इक दूजे पर उपकार, जीवों का सूत्र विचार॥२१॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-असद् भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं जीवद्रव्योपकार-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

वर्तना-परिणाम-क्रियाः परत्वा-परत्वे च कालस्य ॥२२॥

वर्तन परिणमन क्रिया से, छोटा या बड़ा वया से ।
ये काल द्रव्य उपकार, लक्षण निश्चय-व्यवहार॥२२॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-असद्भूत- व्यवहारनयेन सूत्रमिदं कालद्रव्योपकार -ज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णवन्तः पुद्गलाः॥२३॥

रस गन्ध रूप अरु फास, पुदगल के गुण हैं भाष।
हो भेद सूक्ष्म या थूल, चौ गुण हैं सब के मूल॥२३॥

ऊँ ह्रीं अशुद्ध-द्रव्यार्थिकनयेन सूत्रमिदं पुद्गलदद्रव्यगुण-विशेषज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य-स्थौल्य-संस्थान-भेद-

तमश्छाया-तपोद्योत वन्तश्च॥२४॥

जो शब्द बन्ध औ सूक्ष्म, संस्थान भेद स्थूल ।
तम छाया आतप द्योत, पर्यायें ही सब होत॥२४॥

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं पुदगलद्रव्यगुण-विशेषज्ञान- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अणवः स्कन्धाश्च॥२५॥।

पुदगल द्वय रूप विभेद, अणु या स्कन्ध स्वभेद ।
जग में जो कुछ दिख जाता, जड़ है क्यों तू हरषाता॥२५॥

ऊँ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं पुद्गगलद्रव्य-भेदज्ञान प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेद-संघातेभ्यः उत्पद्यन्ते॥२६॥

स्कन्धों की उत्पत्ती, है भेद-संघात प्रवृत्ती।
केवल विभेद संघात, भी कारण है विख्यात॥२६॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-असद्‌भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं पुद्गलस्कन्ध -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेदा-दणुः॥२७॥

अणु उत्पत्ती का काजा, कर कर भेदों से पाजा।
अणु तो न कब हु दिख पाता, विज्ञान रहा अज्ञाता॥२७॥

ऊँ ह्रीं स्वभावनयेन सूत्रमिदं अणूत्पत्ति -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेद-संघाताभ्यां चाक्षुषः॥२८॥

खण्डन या संघातन से, नहिं दिखता कुछ आँखन से।
खण्डन संघात मिला दे, तो चक्षू से दिख पावे॥२८॥

ऊँ ह्रीं अस्वभावनयेन सूत्रमिदं चाक्षुषस्कन्धोत्पत्ति-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सद् द्रव्य-लक्षणम्॥२९॥

कह आये जो षट् द्रव्य, उनका लक्षण ज्ञातव्य ।

सत रहते द्रव्य हमेशा, अनरूप रूप चाहे कैसा॥२९॥

ॐ ह्रीं स्वभावनयेन सूत्रमिदं सद्द्रव्यलक्षण-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्॥३०॥

जो नित्य उपजती नसती, पर्याय ध्रौव्य में वसती।

उत्पाद ध्रौव्य व्यय जाना, लक्षण सद्-रुप बखाना॥३०॥

ॐ ह्रीं उत्पादव्ययसापेक्षअशुद्ध-द्रव्यार्थिकनयेन सूत्रमिदं सत्पदार्थ ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तद्भावाव्ययं नित्यम्॥३१॥

जो भाव सहित सो द्रव्य, व्यय उसका होय न नित्य।

यह ही तो ध्रौव्यपना है, लक्षण यह बना तना है॥३१॥

ॐ ह्रीं सत्ताग्राहकशुद्धद्रव्यार्थिकनयेन सूत्रमिदं नित्यद्रव्य-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्पिता-नर्पित-सिद्धेः॥३२॥

वस्तू त्रय रूप कही है, अनेकान्त स्वरूप सही है।

यदि इक नय होता अर्पित, दूजा नय स्वयं अनर्पित॥३२॥

ॐ ह्रीं अनेकान्तनयेन सूत्रमिदं अनेकान्तस्वरूप -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्निग्ध-रूक्षत्वाद् बन्धः॥३३॥

किस कारण अणु बंध जाते, यह नियम यहाँ बतलाते।

स्निग्ध रूक्ष गुण से ही, बन्धन पुदगल है देही॥३३॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं पुद्गलबन्धस्वरूप -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न जघन्य-गुणानाम्॥३४॥

यदि इक गुण वाले होते, स्निग्ध रूक्ष गुण थोते।

उनका नहिं होता बन्ध, यह कहता सूत्र प्रबन्ध॥३४॥

ॐ ह्रीं नियतनयेन सूत्रमिदं जघन्यगुणस्वरूप -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं

निर्वपामीति स्वाहा।

गुण-साम्ये सदृशानाम्॥३५॥

अणु में गुण हो य समाना, तो बन्ध नहीं है माना।
चाहे सम जाति विजाती, बंधन होता नहिं साथी॥३५॥

ऊँ ह्रीं नियतनयेन सूत्रमिदं पुद्गलबन्धव्यवस्थानिषेध-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्व्यधिकादि-गुणानां तु॥३६॥

बंधन उन अणु में सारे, द्वय गुण अधिके जो धारे ।
चाहे सम जाति विजाती, बंधन हो जाता साथी॥३६॥

ऊँ ह्रीं नियतनयेन सूत्रमिदं पुद्गलबन्धव्यवस्थाविधि - प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च॥३७॥

बंधन से अधिक गुणों में, परिणति कम गुण अणु जामें।
ज्यों गुणमय थोड़ी स्याही, नीला बहु पानी भाई॥३७॥

ऊँ ह्रीं परिणामपरिणामि-सम्बन्धि-उपचरितसद्भूतव्यवहारनयेन सूत्रमिदं पुद्गलबन्धफल-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुण-पर्ययवद् द्रव्यम्॥३८॥

जिन में हों गुण पर्यायें, लक्षण द्रव्यों का गायें।
सत्ता त्रय नहीं जुदी है, इस युत सत द्रव्य सही है॥३८॥

ऊँ ह्रीं सद् भूत व्यवहारनयेन सूत्रमिदं द्रव्यलक्षण-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कालश्च॥३९॥

है द्रव्य काल भी जानो, उत्पाद ध्रौव्य व्यय मानो।
गुण निष्क्रिय तथा अरूपी, नहिं बहु परदेशी प्ररूपी॥३९॥

ऊँ ह्रीं अस्तित्वनयेन द्रव्यार्थिकनयेन सूत्रमिदंकालद्रव्य -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोऽनन्त-समयः॥४०॥

नहिं होय समय का अन्त, कहते ऐसा भगवन्त ।
यह काल प्रमाण बताया, व्यवहार मुख्य से गाया॥४०॥

ऊँ ह्रीं पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं कालद्रव्यपर्याय-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्याश्रया निर्गुणाः गुणाः॥४१॥

गुण का आश्रय है द्रव्य, नहिं छोड़ कहीं प्राप्तव्य।
गुण में अन गुण नहिं होते, गुण के लक्षण यह होते॥४१॥

ऊँ ह्रीं सद्भूत व्यवहारनयेन सूत्रमिदं द्रव्यगुण-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तद्भाव : परिणामः॥४२॥

जिसका जो भाव कहा है, वह ही परिणाम रहा है।
परिणाम रही पर्यायें, द्रव्यों में वही समायें॥४२॥

ऊँ ह्रीं भावनयेन सूत्रमिदंद्रव्यपरिणाम -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(महार्घ्यं)

पुद्गल धर्म अधर्माकाश, काल द्रव्य का वर्णन भी
द्रव्य गुणों पर्यायों के संग, पाठ पाँचवां सुनें सभी।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले, रुचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का, अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥

ऊँ ह्रीं जिनमुखोद्भव उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रे पंचमाऽध्यायेभ्यो महाअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इति मण्डलोस्परि पुष्पांजलिं.....)

षष्ठ अध्याय

काय-वाड्-मनःकर्म योगः॥१॥

मिला संयोग यदि मन का, मनस् का योग भी होगा।

हुई लब्धि वचन की तो, वचन का योग भी होगा।
तनिक सा तन मिले तो भी, काय का योग तो होता।
इन्हीं त्रय योग के कारण, भ्रमण संसार में होता॥१॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद् भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं योगत्रय -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स आस्रवः॥२॥

भरे ज्यों नीर खेवट में, हुआ यदि छिद्र इक छोटा।
करम परिणे स्वआतम में, भले इक योग ही होता।
क्रिया यह योग की जानो, क्रिया आस्रव की ओ भाई।
इसी कारण रुले अब तक, जगत जंजाल में भाई॥२॥

ऊँ ह्रीं भावनयेन सूत्रमिदं आस्रवतत्त्व-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभः पुण्यस्या-शुभःपापस्य॥३॥

रखो मन में कुशल भाव, यही कारण सु-योगों का।
करो मत वो अशुभ भाव, जु कारण है कु-योगों का।
सुयोगों से करम पुण्य, कुयोगों से बढ़े पाप।
नियम यह ध्यान में रक्खो, इसी से आत्म पर छाप॥३॥

ऊँ ह्रीं भावनयेन सूत्रमिदं पुण्यपापतत्त्व -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं । निर्वपामीति स्वाहा।

सकषाया-कषाययोः साम्परायि-केर्या-पथयोः॥४॥

बने जो नाथ आस्रव के, कहे दो विध यहाँ जाते।
कषायों से सहित जो हैं, साम्परायिक उन्हें गाते।
कषायों से रहित जीवों में, ईर्यापथ बना आस्रव।
प्रथम संसार का कारण, नहीं दूजे में बन्धास्रव॥४॥

ऊँ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं आस्रवस्वामि -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रिय-कषाया-व्रतक्रियाः पञ्च चतुः पञ्च-

पञ्चविंशति-संख्याः पूर्वस्य भेदाः॥५॥

इन्द्रियाँ पन कषायें चार, क्रिया पच्चीस को देखो।
तथा आस्रव कहे पाँच, सभी सैंतीस को लेखो।
प्रथम आस्रव बने कारण, गुरु ने यह बताया है।
करो शुभ ही क्रिया भविजन, यही सुख गेह साया है॥५॥

ऊँ ह्रीं विशेष-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं सकषायास्रव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीव्र-मन्द-ज्ञाता-ज्ञात-भावाधि-करण-
वीर्य-विशेषेभ्यस्तद्विशेषः॥६॥

जीव कुछ पुण्य भावों से, तथा कुछ मन्द भावों से।
कोई विज्ञात भावों से, कोई अज्ञात भावों से।
विधास्रव में तभी अन्तर, पड़े थोड़ा अधिक जानो।
द्रव्य आधार की शक्ति, बनी कारण सभी मानो॥६॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अधिकरणं जीवा-जीवाः॥७॥

बना आस्रव का आधार, उसी के भेद बतलाते ।
जीव निर्जीव दो आश्रय, रूप बहु और बन जाते ।
करें करुणा गुरु कहते, करो मत जीव खल भाव ।
तथा निर्जीव कृत सारी, क्रिया में हों अशुभ भाव॥७॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-असद् भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं आस्रवाधिकरण - ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आद्यं संरम्भ-समा-रम्भा-रम्भ-योग-कृत-कारितानु-
मत –कषाय विशेषैस्-त्रिस्- त्रिश्-चतुश्चैकशः॥८॥

एक सौ आठ भेदों से, जीव कृत पाप प्रारम्भा।
योग त्रय सह समारम्भा, तथा आरम्भ समारम्भा।
करे कर से व करवाये, किये अघ को सराहे वा।

कषायों में गुणित कर लख, भरत नित पाप जल नौका॥८॥

ऊँ ह्रीं विशेष-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं जीवाधिकरण -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्वर्तना-निक्षेप-संयोग-निसर्गा द्वि-चतुर्द्वि-त्रि-भेदाः परम्॥९॥

मूल उत्तर गुणी रचना, कही द्रव्य भेद से जानो।
तथा निक्षेप चौ विधि से, किये संयोग दो मानो ।
वचन मन तन प्रवत्ती सब, कहीं निर्जीव आधारा।
क्रिया शुभ से कुशलता है, अशुभ तो पाप का भारा॥९॥

ऊँ ह्रीं विशेषव्यवहारनयेन सूत्रमिदं अजीवाधिकरण -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्प्रदोष -निह्नव-मात्सर्यान्तराया-सादनोपघाता-
ज्ञानदर्शनावरणयोः॥१०॥

करम जो ज्ञान दर्शन को, ढकें वो भाव पहिचानो।
सुनो गुण गान दूजों का, नहीं पैशून्य मन आनो।
छुपाओ मत बिना ईर्ष्या, दीप दो ज्ञान दूजों को।
करूँ विच्छेद वा दूषण, ज्ञान घातूं नहीं सोचो॥१०॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं ज्ञानदर्शना-वरणास्रवभाव -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुःख-शोक-तापा-क्रन्दन-वध-परिदेव-नान्यात्म-
परोभयस्थानान्यसद्वेद्यस्य॥११॥

निजी मन या किसी मन में, हुई पीड़ा दुखी होना।
वियोगज इष्टगत शोक, तथा वध रोना अरु धोना।
हुआ अपवाद मन संताप, बिलख रो रो जु चिल्लाता।
देख मन खिन्न हो जावे, असाता करम है आता॥११॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-सद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं असद्वेद्यास्रवभाव - ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूतव्रत्यनु-कम्पा-दान-सराग संयमादियोगः क्षान्तिः शौच-मिति

सद्-वेद्यस्य॥१२॥

दया कर सर्व जीवों पर, व्रती जन प्रति अनूकम्पा।
भले हो रोग सह संयम, मिटा क्रोधादि भूकम्पा।
दान पूजादि जिनपद की, करो मन लोभ परिहारो।
करम साता के ये कारण, सभी शुभ कार्य अन धारो॥१२॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद् भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं सवेद्यास्रवभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलि-श्रुत-संघ-धर्म-देवा-वर्णवादो दर्शन-मोहस्य॥१३॥

घोर मिथ्यात्व का कारण, सुनो गुरु अब सुनाते हैं।
करें अपवाद केवलि का, दोष श्रुत में दिखाते हैं।
श्रमण समुदाय संघों में, देव दूषण लगाते हैं।
अहिंसा धर्म ना मानें, बहुत दुख वो उठाते हैं॥१३॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं दर्शनमोहास्रवभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कषायो-दयात्तीव्र-परिणामश्चारित्र-मोहस्य॥१४॥

कषायों का उदय हो तीव्र, चरित मोही करम आता।
कषायें वो भड़कती जब, करम आस्रव भी बढ़ जाता।
रहे उपभोग बिन वनिता, बनी जो आज बाला है।
योग्य उपभोग ज्यों होती, युवति पर मन रसाला है॥१४॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं चारित्रमोहास्रवभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बह्वा-रम्भ-परिग्रहत्वं नारकस्या-युषः॥१५॥

नाश जीवों के प्राणों का, बहुत जीवों का जिसमें हो।
कहा आरम्भ है इसको, नहीं व्यापार ऐसा हो।
बहुत हो लोभ परिग्रह का, वितृष्णा विश्व में फैले।
नरक आयू के आस्रव में, सहायक भाव ये मैले॥१५॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं

नरकायुरास्रवभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया तैर्यग्योनस्य॥१६॥

रखे मन में नहीं कहता, वचन से और कुछ बोले।
तथा मन से करे कुछ अन, योग तीनों कुटिल डोले।
कपट झट पट झलक जाये, ध्यान हो आर्त नित मन में।
नियम से आयु पशुओं की, पले माया जु पल-पल में॥१६॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं तिर्यग्योनायुरास्रवभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अल्पारम्भ-परिग्रहत्वं मानुषस्य॥१७॥

अल्प हिंसादि करता हो, नहीं सावध परिणाम।
ममत रखता नहीं पर में, बने जब भद्र परिणाम।
मनुष्यायु के आस्रव में, भाव कारण यही होते।
मनुष्यायु को पाकर के, भाव फिर क्यों कुटिल होते?॥१७॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं मनुष्यायुरास्रवभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वभाव-मार्दवं च॥१८॥

बिना समझाये बतलाये, सहज ही शान्त मन सीधा।
कषायें भी उबलती ना, दया दीनों पे मन भीगा।
मनुज देवायु का आस्रव, इन्हीं भावों से होता है।
कही है मन्द भावों की, यहाँ महिमा क्यूँ रोता है॥१८॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निः शीलव्रतत्वं च सर्वेषाम्॥१९॥

अल्प हो पाप आरम्भ, संग संचय भी कम भाता।
तथा व्रत शील ना पाले, सर्व आयू को पा जाता।
मती में गति नहीं रक्खो, सु दृष्टी से धरम पालो।
गये प्रत्येक गति में हैं, गति पंचम को सम्भालो॥१९॥

ॐ ह्रीं सर्वगतनयेन सूत्रमिदं सर्वायुर्बन्धभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सराग-संयम-संयमासंयमा-कामनिर्जरा बाल-तपांसि दैवस्य॥२०॥

देव आयू सु-आस्रव के, भाव भीने सुनाते हैं।
धरत चिन्तामणी संयम, भले कुछ राग पाते हैं।
धरें जो संयमासंयम, व कायक्लेश उठाते हैं।
निरजरा लक्ष्य के बिन कर, बहुत सुरगति लहाते हैं॥२०॥

ॐ ह्रीं असर्वगतनयेन सूत्रमिदं देवायुर्बन्धभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक्त्वं च॥२१॥

अधिक सुख भोग उपभोग, स्वर्ग वैमानिकी देवा।
पहुँचते जन वहाँ वो भी, करी सम्यक्त्व की सेवा।
साथ सम्यक्त्व हो तो फिर, स्वाद सुख का अनोखा है।
साथ मिथ्यात्व के साथी, सुक्ख स्वर्गों का फीका है॥२१॥

ॐ ह्रीं विशेषनयेन सूत्रमिदं सम्यक्त्वमहिमा-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

योगवक्रता-विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः॥२२॥

वचन मन तन क्रिया कुटिला, वक्रता योग कहलाती।
तथा पर प्रति गलत वृत्ती, विसंवादन कही जाती।
'च' पद से चित चंचल पन, चुगल पन अन बहुत बातें।
अशुभ नामा करम आस्रव, इसी कारण बहुत आते॥२२॥

ॐ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत- व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अशुभनाम-कर्मास्रव -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तद्विपरीतं शुभस्य॥२३॥

वचन मन तन क्रिया सीधी, सरलता योग की होती।
बनी सबसे सुखद वृत्ती, सहज मन मैल को धोती।
धर्म धर्मायतन आदर, तजें परमाद भव भीती।

करम शुभ नाम आस्रव यदि, रखें शुभ भाव में प्रीति॥२३॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत- व्यवहारनयेन सूत्रमिदं शुभनामकर्मास्रव -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन-विशुद्धि-र्विनय-सम्पन्नता शील-व्रतेष्वनती-
चारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोग संवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी-साधु-समाधि-
वैया-वृत्यकरण-मर्हदा-चार्यबहुश्रुत-प्रवचनभक्ति-रावश्यका-
परिहाणि-र्मार्ग-प्रभावना-प्रवचन-वत्सलत्व-मिति
तीर्थकरत्वस्य॥२४॥

दरश सम्यक विशुद्धी से, गुणी जन प्रति विनय आना।
शीलवत दोष बिन पाले, सतत निज ज्ञान मन लाना।
डरे संसार दुखों से, त्याग तप हो यथा शक्ति ।
विघ्न बाधा करो दूर, समाधि-साधु की भक्ति॥२४॥
बिना हिंसा हो दुख मुक्ति, वैयावृत्ति सही मानी।
बहुत अनुराग अर्हत में, सूरि बहुश्रुत व जिनवाणी।
षडावश्यक पलें रोज, धर्म महिमा सु दिखलाना।
सहज साधर्मि प्रति नेह, तीर्थकर भाव मन भाता॥२४ब॥

ऊँ ह्रीं भावनयेन सूत्रमिदं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परात्म-निन्दा-प्रशंसे सदसद्-गुणोच्छादनोद्-
भावने च नीचै-र्गोत्रस्य॥२५॥

सदा दूजों की निन्दा में, तथा सदगुण सभी ढाके।
अपन ही मुख बने मिठ्ठू, प्रशंसा गान खुद गाके ।
छिपा के दोष निज के जो, चतुर हम हैं बहुत सोचे।
बन्ध इन भाव से करके, लहाते गोत्र वो नीचे॥२५॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत- व्यवहारनयेन सूत्रमिदं नीचगोत्रास्रवभावज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्त्य-नुत्सेकौ चोत्तरस्य॥२६॥

करें गुणियों का गुण गान, व उनके दोष ना गावें।

जतावें दोष सब अपने, तथा सदगुण ना दिपावें।
दम्भ भावो ं से बचकर के, निजातम भाव नित देखो।
उच्च गोत्रो ंके आस्रव के, भाव यह नित्य शुभ पेखो॥२६॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत- व्यवहारनयेन सूत्रमिदं उच्चगोत्रास्रवभावज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विघ्नकरण मन्तरायस्य॥२७॥

किसी को दान से रोके, किसी के लाभ में बाधा।
भोग उपभोग का योग, बीच में विघ्न या बाधा।
करें या भाव भी रक्खे, अन्तराया करम आवे।
ध्यान रख बन्ध के कारण, तभी बन्धन से बच पावे॥२७॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-असद्भूत- व्यवहारनयन सूत्रमिदं अन्तरायकर्मास्रवभावज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(महार्घ्य)

मन वच कायो ंके त्रययोग, प्रति विशिष्ट विधि का आस्रव
अशुभ और शुभ भावो ंका यह, खेल छठा अध्याय दिखाव।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रुचिर चरू रत्नो ंके दीप।
शुद्ध धूप अरू सर्व फलो ंका अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥

ऊँ ह्रीं जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रे षष्ठाऽध्यायेभ्यो महाअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इति मण्डलोस्परि पुष्पांजलिं.....)

सप्तम अध्याय

हिंसानृत-स्तेयाब्रह्म-परिग्रहेभ्यो विरति र्व्रतम्॥१॥

(बसन्ततिलका)

हिंसा कुशील मृष वा बहु-संग चोरी।
मानीं गयीं बुध जनों कृत पाप मोरी।
हो दूर-दूर अघ से शुभ भाव भाओ।

गाओ बसन्त-तिलका सुख शान्ति पाओ॥१॥

ऊँ ह्रीं असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं व्रत ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश-सर्वतोऽणु-महती॥२॥

जो एक देश अघ छोड़ व्रती बना है।
वो ही हुआ अणुव्रती मद तो मना है।
जो सर्व देश अघ छोड़ व्रती बने हैं।
वो हैं महान महते व्रत में सने हैं॥२॥

ऊँ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं अणुमहाव्रत-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च॥३॥

संकल्प धार फिर भी मन दौड़ता हो ।
भाओ सु भाव मन की थिरता बढ़ाओ।
प्रत्येक पाँच व्रत की पन भावनायें ।
हैं श्रेष्ठ औषधि सुधी गुरुजी बतायें॥३॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-सद् भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वाङ्मनो-गुप्तीर्या-दान-निक्षेपण-समित्या-लोकित-पान-भोजनानि पञ्च॥४॥

गुप्ती सदा वचन की, मन की बनाके ।
भू देखाभाल चलते रखते उठाते ।
आलोक तेज रवि हो तब खान पान ।
ये पाँच भाव दृढ़ ही व्रत युक्तमान॥४॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-सद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अहिंसाव्रतभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध-लोभ-भीरुत्व-हास्य-प्रत्याख्यानान्यनुवीचि-भाषणं च पञ्च॥५॥

वाणी दयामय सदैव हि भावना हो।
जो क्रोध लोभ भय त्याग बिना हँसी के ।
बोलें, वही वचन सत्य लगें सभी के॥५॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-सद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं सत्यव्रतभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शून्यागार-विमोचिता-वास-परो-परोधा-करण-
भैक्ष्य-शुद्धि सधर्मा-विसंवादाः पञ्च॥६॥

आवास थान बन वृक्ष व त्यक्त थान।
बे रोक-टोक अन बैठ तथा बिठान।
हो भै क्ष्य शुद्धि सह धार्मिक से लड़ें ना।
ये भावना पन रहें नहिं चोर हो ना॥६॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-सद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अचौर्यव्रतभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्त्री-राग-कथाश्रवण-तन्मनो-हरांग-निरीक्षण -पूर्व -रतानुस्मरण -
वृष्येष्ट -रस -स्व- शरीर-संस्कार-त्यागाः पञ्च॥७॥

स्त्री राग रंजन कथा सुन ना अपार।
ना घूर घूर वपु-अंगों को निहार।
ना याद भोग कर इष्ट गरिष्ठ त्याग।
श्रंगार काय बिन तू व्रत ब्रह्म पाग॥७॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-सद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं ब्रह्मचर्यव्रतभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनोज्ञा-मनोज्ञेन्द्रिय-विषय-राग-द्वेष-वर्जनानि पञ्च॥८॥

जो अक्ष के विषय पाँच हि आँच माने।
ना राग भाव मन ला मन जो सुहाने।
अच्छी लगे न मन वस्तु न द्वेष ठाने।
भा भाव ठोस व्रत पंचम ओ सयाने॥८॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-सद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिंद अपरिग्रहव्रतभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हिंसा-दिष्विहा-मुत्रा-पाया-वद्य-दर्शनम्॥९॥

खोटे कुकर्म त्रस त्रासित पाप वाले।
होते दुखी जगत में गति कोई पाले।
निन्दा करे जग सभी अपमान देते।

ये सोच के न व्रतवन्त कुकर्म सेते॥९॥

ऊँ ह्रीं ज्ञाननयेनसूत्रमिदं पापफल-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुःख-मेव वा॥१०॥

ज्यों दाद खाज खुजला मन को न चैन ।
त्यों भोग के विषय दुक्ख कहें जु जैन।
हिंसादि पाप खलु भाव कुकार्य सारे ।
ये कोष दोष दुख के तज सोच प्यारे॥१०॥

ऊँ ह्रीं ज्ञाननयेन सूत्रमिदं हिंसादिफलभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

**मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थ्यानि च सत्त्व-
गुणाधिक क्लिश्यमाना-विनयेषु॥११॥**

मैत्री सुभाव सब जीव प्रजाति पे हो ।
आमोद हर्ष गुणियों गुण देख के हो।
हो दीन पे दुखित पे करुणा दिलों में ।
माध्यस्थ भाव रख लो विपरीतकों में॥११॥

ऊँ ह्रीं क्रियानयेन सूत्रमिदं शुभभाव ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगत्काय-स्वभावौ वा संवेग-वैराग्यार्थम्॥१२॥

संसार ये अमिट है कर्ता न हर्ता ।
जीवा अपार भव भार विहार धर्ता ।
काया अनित्य दुख मूल मलीन थैली।
भा भावना मिट सके तन राग रैली॥१२॥

ऊँ ह्रीं गुणनयेन सूत्रमिदं संवेगवैराग्यभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रमत्त-योगात्प्राण-व्यपरोपणं हिंसा॥१३॥

जो देख भाल चलते तजते प्रमाद ।
तो बन्ध पाप नहिं प्राण पलाय पाद।
रागादि भाव सह प्राण वियोग हिंसा।
अध्यात्म आत्म शुभ भाव सही अहिंसा॥१३॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं हिंसा-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस-दभिधान-मनृतम्॥१४॥

वस्तु असत्य कथनी करना विधान।
वा प्राण पीड़न अकारण झठू बान।
माना यही दुखज क्लेशज पाप द्वार।
ज्ञानी गुरू कह रहे चल सत्य धार॥१४॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अनृत-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अदत्ता-दानं स्तेयम्॥१५॥

रक्खी पड़ी गिर गयी यदि अन्य वस्तु।
छूते नहीं भले कीमत लाख अस्तू।
ना भाव ही मन बने उसको उठा लूँ।
अस्तेय मात सह पाथ प्रशस्त पालूँ॥१५॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अनृत-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मैथुन-मब्रह्म॥६॥

रागादि भाव युत मैथुन भाव लाता।
नारी तथा नर मिलें रति को सजाता।
जो शील को गुणन को व्रत ब्रह्म घाते।
ऐसा कुशील बुध त्याग सुधाम पाते॥१६॥

ॐ ह्रीं अशुद्ध-निश्चयनयेन-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अब्रह्म- ज्ञानप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मूर्छा परिग्रहः॥१७॥

चैतन्य या अचित के प्रति मोह भाव।
मेरे हुए मम यही ममता विभाव।
संकल्प है विकलता भव पाप मूल।
मेटूँ मिटे अधमता दुख शूल भूल॥१७॥

ऊँ ह्रीं अशुद्ध-निश्चयनयेन सूत्रमिदं परिग्रह-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निःशल्यो-व्रती॥१८॥

जो जाप ताप व्रत संयम पालते हैं।
माया निदान अरु मोह न पालते हैं।
हो साथ शल्य व्रत के व्रत ना सुहाते ।
ज्यों इक्षु मिष्ट पर गंध न फूल पाते॥१८॥

ऊँ ह्रीं स्वभावनयेन सूत्रमिदं व्रतीभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अगार्यनगारश्च॥१९॥

जो मोह के उदय से घर में निवास।
वो हैं अगार, कुछ धार व्रती सुवास।
तृष्णा तजी विषय की अनगार होते ।
दो भेद हैं व्रती के भव पार होते॥१९॥

ऊँ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं व्रतीभेद-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अणुव्रतोऽगारी॥२०॥

हिंसादि पाँच अघ खान जु अल्प त्यागे।
सम्यक्त्व साथ गुरु पाँच सु पाद पागे ।
गेही बना रुचि पना ग्रह काज में ना।
वो ही कहा अणुव्रती विपदा कछू ना॥२०॥

ऊँ ह्रीं विशेष व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अणुव्रती-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिग्देशा-नर्थ-दण्ड-विरति-सामायिक-प्रोष-धोप-वासोप-भोग-परिभोग-परिमाणा-तिथि-संविभाग-व्रत-सम्पन्नश्च॥२१॥

सीमा दिशा दिगव्रती दश को बनाता।
ग्रामादि ले नियम देशव्रती कहाता।
पापादि काज सब त्याग अनर्थदण्ड।
ये तीन से अणुव्रती गुण वृद्धि मण्ड॥२१अ॥

एकाग्र -योग धर सामयिकी सुधारे ।
आहार त्याग कर प्रोषध-वास धारे।
भोगोपभोग परिसीमित पात्र दान ।
शिक्षाव्रती कर रहे सिख ये प्रदान॥२१ब॥

ॐ ह्रीं विशेष-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं गुणव्रतादि-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मारणांतिकीं सल्लेखनां जोषिता॥२२॥

तैयार हूँ मरण को भय है न चिन्ता ।
काया कषाय शिथलीकर देह अन्ता।
गेही गहे सुव्रत को फल एक चाहें।
देहान्त के समय में गुरु गोद चाहें॥२२॥

ॐ ह्रीं संश्लेषसहितानुपचारिता-सद्भूत- व्यवहारनयेन सूत्रमिदं सल्लेखना- ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शङ्का-कांक्षा-विचिकित्सान्यदृष्टि-प्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टे-रतिचाराः॥२३॥

सन्देह तत्त्व मन में भव सौख्य कांक्षा।
वा देह के धरम से मन में जुगुप्सा।
वा संस्तुति मत जु अन्य करे प्रशंसा।
सम्यक्त्व दोष पन ये मत धार हँसा॥२३॥

ॐ ह्रीं अशुद्ध-निश्चयनयेन सूत्रमिदं सम्यक्त्वातिचार-ज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्रतशीलेषु पञ्च पञ्च यथाक्रमम्॥२४॥

पायी निधी अणुव्रती उन को निहारो।
जो सात शील व्रत हैं उनको सुधारो।
हैं दोष ज्यों सु-व्रत के सुन पाँच-पाँच।
वो ज्ञान में यदि रहें व्रत को न आँच॥२४॥

ॐ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं व्रतातिचारसंख्या-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बन्ध-वध-च्छेदाति-भारारोपणान्न-पाननिरोधाः॥२५॥

बाँधे तथा वध करे पर अंग छेदे।
सामर्थ्य से अधिक भार जु डार भेदे।
रोके न दे अशन को अति कष्ट-पीड़ा।
व्रत्ती अहिंस व्रत की पन दोष क्रीड़ा॥२५॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अहिंसाव्रतातिचारभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्योपदेशरहोभ्याख्यान-कूटलेख-
क्रिया न्यासापहार-साकारमन्त्र-भेदाः॥२६॥

दो वेद के मिलन का कुछ गुप्त काज।
मिथ्योपदेश कूटन लिखना कुकाज।
धान्यादि को हड़पते चुगली कराते।
सत्याणुवृत्ति जन वो मैला बनाते॥२६॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं सत्यव्रतातिचार-भाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्तेनप्रयोग-तदाहृता-दान-विरुद्ध-राज्याति-क्रम-
हीनाधिक-मानोन्मान-प्रतिरूपक-व्यवहाराः॥२७॥

चोरी करा खुद करे अन को सराहें।
ले माल चोर बिन न्याय अनीति राहें।
मानोनमान कमती-बढ़ती मिलाते।
सादृश्य वस्तु छलते अघ को बढ़ाते॥२७॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-असद् भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अचौर्यव्रतातिचार-भाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर-विवाह करणेत्वरिका-परिगृहीता-परिगृहीता-गमना
नङ्गक्रीडा-काम-तीव्राभिनि –वेशाः॥२८॥

शादी विवाह पर का पर से कराना।
वेश्या ग्रहीत अग्रहीत निकाय जाना।
क्रीड़ा अनंग अति कामुक लालसा हो।
तो ब्रह्मचर्य व्रत निश्चित दोष सा हो॥२८॥

ऊँ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं ब्रह्मव्रतातिचारभाव-

ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षेत्र-वास्तु-हिरण्य-सुवर्ण-धनधान्य-दासी-
दास-कुप्य-भाण्ड-प्रमाणातिक्रमाः॥२९॥

वास्तू हिरण्य धन धान्य व कुप्य भाण्ड
दासी सुवर्ण अरु खेत व दास शान ।
भोगोपभोग परिमाण व्रताऽतिचार ।
त्यागो कहें सगुरु जो विरताऽतिचार॥२९।।

ॐ ह्रीं स्वजात्युपचरित-विजात्युपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अपरिग्रव्रतातिचारभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊर्ध्वा-धस्तिर्यग्व्यतिक्रम-क्षेत्रवृद्धि-स्मृत्यन्तरा-धानानि॥३०॥

ऊँची अधो दश दिशा तिरछी दिशा को।
लोभादि के वश बढ़ाकर भूलता जो।
व्यापार हेतु बढ़ती यदि देश सीमा।
तो पूर्ण शुद्ध नहिं दिग्वत की महीमा॥३०॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं दिग्व्रतातिचारभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आनयन-प्रेष्यप्रयोग-शब्द-रूपानुपात-पुद्गल-क्षेपाः॥३१।

वस्तू रही परिधि बाहर वो बुलाना।
भेजें कभी पुरुष वा आवाज देना।
रूपानुपात करते कुछ फेंक देते ।
वो देशवृत्ति व्रत में अतिचार लेते॥३१॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं देशव्रतातिचार-भाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कन्दर्प-कौत्कुच्य-मौखर्या-समीक्ष्याधि-कर-
णोपभोगपरिभोगा-नर्थक्यानि॥३२॥

रागादि हास्य अति साथ हि भण्ड बोले ।
चेष्टा कुचेष्ट तन से अति धृष्ट बोले ।
सोचे बिना अधिक काज व वस्तु धारे ।

आनर्थ्यदण्ड व्रत दोष लखो सखा रे॥३२॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद्‌भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अनर्थदण्डव्रतातिचारभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

योग-दुष्प्रणि-धाना-नादर-स्मृत्यनुपस्थानानि॥३३॥

काया चले मन खाले वचना अशुद्धि ।
वा मान आदर नहीं अरु भूल बुद्धि ।
सामायिकी न बिन दोष रही व्रती के ।
तो द्ववादशा व्रत पलें पर फूल फीके॥३३॥

ॐ ह्रीं अशुद्ध-निश्चयनयेन सूत्रमिदं सामयिकव्रतातिचारभाव - ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अप्रत्य-वेक्षिता-प्रमार्जितोत्सर्गादान-संस्तरोप-
क्रमणा-नादर स्मृत्यनु-पस्थानानि॥३४॥

पूजादि वस्तु गहता पट को बिछाता।
मूत्रादि त्याग लखा शोध बिना गिराता।
उत्साह ना न सुध भूलत नित्य काज ।
तो प्रोषधानशन में व्रत दोष राज॥३४॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद् भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं प्रोषधव्रतातिचार - भाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सचित्त-सम्बन्ध-सम्मिश्रा-भिषव-दुःपक्वाहाराः॥३५॥

आहार जो सचित, चित्त मिला हुआ हो ।
सम्बन्ध हो सचित का वृष भोज वा हो ।
दुष्पक्व भोजन तथा करना व्रती को।
भोगोपभोग परिमाण सदोषता को॥३५॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद्‌भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं भोगोपभोग-व्रतातिचारभाव-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सचित्त-निक्षेपा-पिधान-पर-व्यपदेश-मात्सर्य-कालातिक्रमाः॥३६॥

जो पात्र हो सचित चित्त ढका सु भोज ।
दाता जु अन्य इसका कह देय भोज।

सत्कार के बिन दिया गतकाल खाना।
आतिथ्य दान बिन दोष नहीं हि माना॥३६॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद् भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अतिथिसंविभाग-वतातिचार-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवित-मरणाशंसा - मित्रानुराग-सुखानुबन्धनिदानानि॥३७॥

इच्छा कि जीवित रहूँ मर जाय आज ।
खोले जु संग वह मित्र रु भोग काज ।
जो बार बार कर याद निदान चाह।
सल्लेखना नियम से बिगड़े कुराह॥३७॥

ॐ ह्रीं अशुद्ध-निश्चयनयेन सूत्रमिदंसल्लेखनाव्रतातिचार-ज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानम्॥३८॥

दाता वही जु निज का धन दान देते ।
देते हि पुण्य सुख को निज हाथ लेते ।
कल्याण हो स्व पर का यह भावना हो ।
वो दान बीज फलता वट वृक्ष सा हो॥३८॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद् भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं दानस्वरूपज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विधिद्रव्य दातृपात्र-विशेषात्तद्विशेषः॥३९॥

आहार दान विधि हो नवधा विशेष ।
स्वाध्याय ध्यान सहकारिक द्रव्य शेष।
हो पात्र उत्तम तथा गुण सप्त दाता।
तो दान का फल बने नित सौख्य साता॥३९॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं विशेषदानादि-स्वरूप-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(महार्घ्य)

शुभ उपयोग व्रतों से होता, पुण्यबंध अघ निर्जर भी
कैसे होवे निरतिचार मन, पाठ सिखाया सप्तम ही।

जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रुचिर चरू रतनों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥

ऊँ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रे सप्तमाऽध्यायेभ्यो महाअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इति मण्डलोस्परि पुष्पांजलिं.....)

अष्टम अध्याय

(चाल-इहविध राज करे नरनायक)

मिथ्या-दर्शना-विरति-प्रमाद-कषाय-योगा बन्ध -हेतवः॥१॥

क्या कारण है भटक रहे हम, दुख ही दुख सहते ।
हूँ स्वतन्त्र पर पकड़ा किसने, क्या कारण रहते ।
जिन जिन ने निज जान लिया, वो कहते मत सेवो।
दृग मिथ्या अविरति कषाय वा, योग प्रमादों को॥१॥

ऊँ ह्रीं अशुद्ध-निश्चयनयेन सूत्रमिदं बन्धहेतु-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान्
पुद्गला -नादत्ते स बन्धः॥२॥

ये हेतू बन्धन के अब तुम, बन्धन को जानो।
सहित कषायों के कारण ही, कर्म लेप मानो।
कार्य योग्य पुद्गल जब गहता, बन्ध श्लेष होता।
बन्ध बन्ध है बन्ध फन्द है, जग जा क्यों सोता॥२॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद् भूत-व्यवहारनयेन ऋजुसूत्रनयेन च सूत्रमिदं बन्धस्वरूप-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रकृति-स्थित्यनुभव-प्रदेशास् तद्विधयः॥३॥

चार भेद से बन्धन होते, काज अलग कहते ।
कर्मों का जैसा स्वभाव है, प्रकृति त्यों बंधते ।
काल करम की थिति औ रस है, अनुभागी बन्धन।

कार्य प्रदेशों का अवधारण, है प्रदेश बन्धन॥३॥

ऊँ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदंबन्धभेद -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आद्यो ज्ञान-दर्शनावरण-वेदनीय-
मोहनी -यायु-र्नाम गोत्रान्तरायाः॥४॥

ज्ञानावरणी दृग आवरणी, वेदनीय जानो ।
मोहनीय अरु आयू गोत्र, अन्तराय मानो।
रस रुधिरादि विविध रूप में, परिणे ज्यों खाना।
ग्रहण आत्म परिणामों से त्यों, करम बन्ध माना॥४॥

ऊँ ह्रीं सामान्य-व्यवहारनयेन अशुद्ध-द्रव्यार्थिकनयेन च सूत्रमिदं अष्टकर्मस्वरूप -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पञ्च-नव-द्वयष्टा-विंशति-चतुर्द्वि-चत्वारिंशद्-द्वि-पञ्च-भेदा
यथाक्रमम्॥५॥

ज्ञानावरणी पाँच भेद हैं, दृग कर्मा के नौ।
वेदनीय द्वय आयु चार वा, गोत्र करम के दो ।
मोहनीय अट्ठाईसा हैं, बियालीस नामा।
अन्तराय आवरण पाँच हैं, भेद अन्य माना॥५॥

ऊँ ह्रीं विशेष-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अष्टकर्मभेद-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मति-श्रुतावधि-मनःपर्यय-केवलानाम्॥६॥

मती ज्ञान श्रुतज्ञान अवधि औ मनपर्यय ज्ञान ।
अन्तिम केवल ज्ञान कहा जो, अद्भुत तू जान।
सब ज्ञानों को ढंकने वाले, अलग अलग विधि हैं।
मूलोत्तर भेदों से उनके भेद बहुत विध हैं॥६॥

ऊँ ह्रीं अन्वय-सापेक्ष-द्रव्यार्थिकनयेन सूत्रमिदं ज्ञानावरण-प्रकृतिभेद ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चक्षु-रचक्षु-रवधि-केवलानां निद्रा-निद्रानिद्रा-
प्रचला प्रचलाप्रचला -स्त्यान -गृद्धयश्च॥७॥

चक्षु अचक्षु अवधी केवल, दर्शन आवरणा।
निद्रा अरु निद्रानिद्रा वा, प्रचला का होना।
स्त्यानगृद्धि प्रचलाप्रचला नव, भेद बने जिनके ।
दरशन को ढक देते जैसे, द्वारपाल गृह के॥७॥

ऊँ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं दर्शनावरणप्रकृतिभेद -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स-दसद्-वेद्ये॥८॥

कुशल भाव का वेदन हो ना, वेदनीय साता।
अकुशलता मन में हो जाना, काम असाता का।
वेदनीय दौनों कर्मों की, दुखा ही है रानी।
हर्ष विषाद छोड़ के भज लो, समता सुख प्रानी॥८॥

ऊँ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं प्रकृतिभेद -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन-चारित्र-मोहनीया-कषाय-कषाय-वेदनी-याख्यास्-त्रि-द्विनव-षोडशभेदाःसम्यक्त्व-मिथ्यात्व-तदुभयान्य-कषाय-कषायौ हास्य-रत्यरति-शोक-भय-जुगुप्सा-स्त्री-पुन्नपुंसक-वेदा अनन्तानुबन्ध्य-प्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान-संज्वलन-विकल्पाश्चैकशः क्रोध मान-माया-लोभाः॥९॥

दर्श मोह के तीन नाम हैं, सम्यक मिथ्यातम ।
मिश्र नाम तीजा है दो विधि,चरित मोह का कर्म ।
वेदनीय अकषाय प्रथम है, नव भेदों से मान ।
हास्य रत्यरति शोक जुगुप्सा, भय स्त्री वेदा
जान॥९अ॥
तथा नपुंसक पुरुष वेद हैं, सह कषाय कहता।
अनन्तानु अप्रत्याख्याना, प्रत्याख्यान तथा।
साथ संज्वलन क्रोध मान के, लगी लोभ माया।
इस विधि अट्ठाईस कषायें, गुरु ने समझाया॥९ब॥

ऊँ ह्रीं सामान्य-व्यवहारनयेन विशेष-व्यवहारनयेन च सूत्रमिदं

मोहनीयकर्मप्रकृतिभेद -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नारक -तैर्यग्योन-मानुष -दैवानि॥१०॥

आयु कर्म के भेद चार हैं, पशू नारकी देव।
तथा मानुषी आयु बेड़ी, जन्म मरण की टेव।
चार कषायें चार आयु की, चार दिशा खूटे ।
आयु कर्म की बेड़ी टूटे, पुनर्जन्म छूटे॥१०॥

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं आयुः कर्मप्रकृतिभेद -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

गति-जाति-शरीराङ्गो-पाङ्ग-निर्माण-बंधन-संघात-संस्थान-संहनन-स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णानु-पूर्व्यागुरु-लघूपघात-परघाता-तपोद्यो-तोच्छ्वास-विहायोगतयः प्रत्येक-शरीर-त्रस-सुभग-सुस्वर-शुभसूक्ष्म-पर्याप्ति-स्थिरादेय-यशःकीर्ति-सेतराणि तीर्थकरत्वं च॥११॥

नाम कर्म के भेद कह रहे, ब्यालिस नामों से।
गति जाति तन अंगोपांगा, औ निर्माणों से।
बंधन संघातन संस्थाना, संहनन स्पर्शा है।
गन्ध वर्ण रस आनूपूर्वी, अगुरुलघु भी है॥११अ॥
उपघाती परघाती आतप, गति विहाय नामा।
उद्योतन प्रत्येक शरीरा, उछ्वासा सूक्ष्मा।
त्रस शुभ सुभग सुस्वरा स्थिर औ, भेदा परियाप्ति ।
यशःकीर्ति आदेय इतर विधि, तीर्थंकर शक्ति॥ब॥

ऊँ ह्रीं भेदग्राहकसंग्रहनयेन सूत्रमिदं नामकर्मप्रकृतिभेद -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उच्चैर्नीचैश्च॥१२॥

उच्च नीच दो ही भेदों का, गोत्र कर्म होता।
जन्म पूज्य कुल में हो कारण, उच्च गोत्र होता।
निन्द्य आचरण कुल में जनना, नीच गोत्र जानो।
दुर्लभता की बात कौन सी, यह तो पहिचानो॥१२॥

ऊँ ह्रीं भेदग्राहकसंग्रहनयेन सूत्रमिदं गोत्रकर्मप्रकृतिभेद-ज्ञान-प्राप्तये

अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दान-लाभ-भोगोप-भोग-वीर्याणाम्॥१३॥

इच्छा हो पर विघ्न उपस्थित, अन्तराय कर्म ।
पाँच भेद हैं कार्य रोकना, इसका है धर्म ।
दान लाभ में तथा भोग में. औ उपभोगों में ।
वीर्य शक्ति विधि का बन्धन है, आत्म प्रदेशों में॥१३॥

ऊँ ह्रीं भेदग्राहकसंग्रहनयेन सूत्रमिदं अन्तरायकर्मप्रकृतिभेदज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आदितस् तिसृणा-मन्तरायस्य च
त्रिंशत्सागरोपम-कोटी-कोट्यः परा स्थितिः॥१४॥

एक बार यदि ये बंध जाते, कितनी उमर रहे ।
उत्कृष्टा और जघन भेद की, थिति गुरु सुनो कहें।
दृग ज्ञानावरणी वेदन औ, अन्तराय विधि की।
उत्कृष्टी थिति कोटाकोटी, तीस सागरा की॥१४॥

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं चतुःकर्मोत्कृष्टस्थिति-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तति-र्मोहनीयस्य॥१५॥

भव वन में भटकन का कारण, मोहनीय नामा।
अष्ट कर्म में प्रबल कर्म यह, सबका है मामा।
सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर, उत्कृष्टी थिति है।
इसी वजह से काल अनादी, से बिगड़ी मति है॥१५॥

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं मोहकर्मोत्कृष्टस्थिति-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विंशति-र्नाम-गोत्रयोः॥१६॥

नाम कर्म औ गोत्र कर्म थिति, एक साथ कहते ।
कोड़ाकोड़ी बीस सागरा, उत्कृष्टा रहते ।
जो सैनी पंचेन्द्रिय पूरण, मिथ्यादृष्टी हैं।

उन जीवों के ही उत्कृष्टी, थिति यह पड़ती है॥१६॥

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं नामगोत्रकर्मोत्कृष्टस्थिति-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रयस्त्रिंशत्सागरो-पमाण्यायुषः॥१७॥

आयु कर्म की थिति उत्कृष्टी, कहते हैं सुन लो।
सागर तैंतीसा प्रमाण है, ध्यान यही रख लो।
दुख उत्कृष्टे सुख उत्कृष्टे, भोगे खूब अरे।
जन्म मरण दुख नहिं ये टूटा, घूमे खूब फिरे॥१७॥

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं आयुःकर्मोत्कृष्टस्थिति-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपरा द्वादश-मुहूर्ता वेदनीयस्य॥१८॥

अब जघन्य थिति हैं बतलाते, कर्म वेदनी की।
कहे मुहूरत बारह जानो, वाणी जिनवर की।
गुणस्थान दसवाँ हो भविजन, यह थिति तब पड़ती।
इससे पहिले कभी न इतनी, थिति कमती पड़ती॥१८॥

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं वेदनीयकर्मजघन्यस्थिति-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाम-गोत्रयो-रष्टौ॥१॥

नाम कर्म औ गोत्र कर्म की, जघन थिति कहते ।
आठ मुहूरत से पहिले नहिं, जहाँ करम हटते ।
यह भी दशवें गुणस्थान में, बंधती है भाई।
इस सीढ़ी पर आओ जल्दी, सूखे भव खाई॥१॥

ऊँ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं नामगोत्रकर्म-जघन्यस्थिति-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शेषाणा-मन्तर्मुहूर्ताः॥२०॥

ज्ञानावरणी दृग आवरणी, मोहनीय आयू ।
तथा अन्तराय करमन की, थिति है समझा यूँ॥

पाँचों ही अन्तरमूहुरत तक, आतम से बंधते ।
जघन समय यह जानो बन्धु, आगम में कहते॥२०॥

ॐ ह्रीं अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं शेषकर्मजघन्यस्थिति-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विपाकोऽनुभवः॥२१॥

नाना विधि के करम कहे हैं, नाना विधि जीवा।
नाना विधि परिणामों का फल, नाना विधि पीवा।
उदय करम का ही विपाक है, यह ही अनुभागा।
फल निज परिणामों से मिलता, कमती वा ज्यादा॥२१॥

ॐ ह्रीं अनुभवनयेन सूत्रमिदं अनुभवबंध-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स यथानाम॥२२॥

ज्ञानावरणी का फल ज्यों है, ज्ञान शक्ति ढंकना।
दर्शन आवरणी का फल त्यों, दर्शन को ढंकना।
तथा इसी विधि अन्य कर्म का, कहा नाम जैसा।
उदय समय आने पर मिलता, फल उसका तैसा॥२२॥

ॐ ह्रीं नामनयेन सूत्रमिदं अनुभवबंधविशेष-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ततश्च निर्जरा॥२३॥

कर्म उदय आने पर उसका, फल आतम भोगे ।
थिति पूरी होने पर ही वह, आतम को छोड़े।
नाम इसी का कहा निर्जरा, द्वय विधि से जानो।
सविपाकी अविपाक भेद से, मानो श्रद्धानो॥२३॥

ॐ ह्रीं भावनयेन सूत्रमिदं प्रदेशबंध -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाम-प्रत्ययाः सर्वतो योग-विशेषात् सूक्ष्मैक-
क्षेत्रावगाहस्थिताः सर्वात्मप्रदेशेष्वनन्तानन्त-प्रदेशाः॥२४॥

नाम अनुसार बंधे सातों या, आठों ही करमा।
प्रतिक्षण बन्धन जिसका कारण, योग कर्म करना।
सूक्ष्म स्वभावी कर्म आत्म इक, क्षेत्रा अवगाही।
प्रति प्रदेश से करम अनन्ते, बंधते हैं भाई॥२४॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत- व्यवहारनयेन सूत्रमिदं प्रदेशबंध -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सद्वेद्यशुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम्॥२५॥

शुभ भावों से शुभ प्रकृति जो, आतम में आती।
वह प्रकृति ही पुण्य कर्म है, सबके मन भाती।
वेदनीय साता शुभ आयू, नाम गोत्र शुभ जो।
भेद विधि से बियालीस हैं, समझो और गहो॥२५॥

ऊँ ह्रीं स्वजात्यसद्भूत-व्यवहारनयेन विशेषनयेन च सूत्रमिदं पुण्यकर्मप्रकृति-ज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतोऽन्यत्पापम्॥२६॥

अशुभ भाव से अशुभ प्रकृती, आतम में आती।
वे प्रकृति ही पाप कर्म हैं, जग में भटकाती।
पुण्य प्रकृतियाँ छोड़ शेष जो, बची पाप जानो।
भेद विधी से ब्यासी होती, सब जन यह मानो॥२६॥

ऊँ ह्रीं स्वजात्यसद्भूत-व्यवहारनयेन विशेषनयेन च सूत्रमिदं पापकर्मप्रकृति-ज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(महार्घ्य)

अष्टकर्म के बन्धन की विधि, इस अध्याय में बतलाई।
बन्ध तत्त्व का ज्ञान किया तो, बन्ध तत्त्व से बच पाई।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रुचिर चरू रत्नों के दीप।
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥

ऊँ ह्रीं जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित-तत्वार्थसूत्रे अष्टमाऽध्यायेभ्यो महाअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इति मण्डलोस्परि पुष्पांजलिं.....)

नवम अध्याय

आस्रव-निरोधःसंवरः॥१॥

(लय-जिसने रागद्वेष कामादिक.....)

नव नव कर्मों का कारण था, आस्रव उसको समझाया।
उस आस्रव का रुक जाना ही, संवर है यह बतलाया।
मोक्ष तत्त्व का मुख्य हेतु यह, इसको पाने यत्न करें।
नीर छिद्र में डाट लगा ज्यों, सहज नाव उस पार तिरें॥१॥

ॐ ह्रीं व्यवहारनयेन सूत्रमिदं संवरतत्त्व-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सु गुप्ति-समिति-धर्मानुप्रेक्षा-परीषहजयचारित्रैः॥२॥

वह संवर होगा कैसे यह, शीघ्र गुरु अब बतलाओ ।
समिति गुप्ति अरु धर्म भावना, बार-बार मन में भाओ।
कष्ट परीषह पथिक सहे जब, सहज शान्ति पथ आ जाता।
दुराचरण तन चर्म मोह तज, चरित धार शिव सुख पाता॥२॥

ॐ ह्रीं एकादेशशुद्धनयेन सूत्रमिदं संवरतत्त्वविधि-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तपसा निर्जरा च॥३॥

चरित चित्त में दृग हो ऊपर, तप अग्नि जब ताप बढ़े।
संवर तत्त्व प्रौढ़ हो जावे, तथा निर्जरा खूब बढ़े।
चट-चट-चटपट करम दहन हो, नया करम भी ना आता।
झटपट-झटपट करम नाश कर, मुक्ति वधू में रम जाता॥३॥

ॐ ह्रीं विशेषसंग्रहनयेन सूत्रमिंद जीवद्रव्य -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्योग -निग्रहो गुप्तिः॥४॥

मन तन वचन योग त्रय क्रीड़ा, रोक लगा निज को पेखे।

आतम बहिरातम ना होवे, ढककर के तातैं रक्खो।
ढककर रखना रक्षण करना, गुप्तातम हो गुप्ती से ।
सम्यक मन तन वचन क्रिया की,गुप्ति मिलाती मुक्ती से॥४॥

ऊँ ह्रीं क्रियानयेन सूत्रमिदं गुप्ति -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ईर्या-भाषैषणा-दान-निक्षेपोत्सर्गाः समितयः॥५॥

यदि असमर्थ गुप्ति में मुनिवर, सम्यक समिती साथ रहें।
चौ कर भूमि देख के चलते, हित मित औ प्रिय वचन कहें।
दोष रहित आहार करें अरू, देख भाल उपकरण धरें।
मूत्र श्लेष्म मल प्रतिलेखन कर, शुद्धि भूमि पर त्याग करें॥५॥

ऊँ ह्रीं क्रिया-विकल्पनयेन सूत्रमिदं समिति-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम-क्षमा-मार्दवार्जव-शौच-सत्य-संयम-
तपस्त्यागा-किञ्चन्य ब्रह्मचर्याणि धर्मः॥६॥

दशधर्मों का भूषण जिनका, गुरुवर ऐसे हैं कहते ।
उत्तम क्षमा मार्दवा आर्जव, शौच सत्य संयम रखते ।
तथा करें तप त्याग अकिंचन, ब्रह्मचर्य में नित्य रमें ।
ऐसे दश गुण मणि से भूषित, पाद पद्म मम हृदय रहें॥६॥

ऊँ ह्रीं स्वभावभूतशुद्धनयेन सूत्रमिदं दशधर्म -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनित्याशरण-संसा-रैकत्वान्यत्वा-शुच्यास्रव-संवर-निर्जरालोक-
बोधिदुर्लभ-धर्मस्वाख्या-तत्त्वानु-चिन्तन-मनुप्रेक्षाः॥७॥

भव अनित्य है अशरण हूँ मैं,सार रहित यह है संसार ।
मैं तो नित्य अकेला प्रतिपल, अन्य सभी अन्यत्व विचार ।
देह अशुचि है महा घिनौनी, मन तन वचन तु आस्रव है।
इनके रुकने से हो संवर, तभी निर्जरा का सुख है॥७॥
तथा विचारें लोक स्वरूपा, और बोधि की दुर्लभता।

जिनवर द्वारा कथित धर्म जो, वह ही है सुख की सरिता।
बार-बार बारह भावना का, मुनि मन में नित्य प्रवाह।
धार धीर उस पार जा रहा, पाता आतम सत्य स्वभाव॥७ब॥

ऊँ ह्रीं शुद्धस्वभावहेतुनयेन सूत्रमिदं द्वादशभावना -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मार्गा च्यवन-निर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः॥८॥

मोक्ष मार्ग की खड्ग धार पर, वीर धीर मुनि चल जाते ।
सहें परीषह नित्य तभी तो, उपसर्गों को सह पाते ।
घोर परीषह तातें सहते, मन मेरु सम अडिग रहे।
च्यवन मार्ग से कभी न होवे, कर्म निर्जरा सतत रहे॥८॥

ऊँ ह्रीं पुरुषाकारनयेन सूत्रमिदं परीषह-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुत्पिपासा-शीतोष्ण-दंश-मशक-नाग्न्यारति-स्त्री-चर्या-निषद्याशय्या-क्रोश-वध-याचना-लाभ-रोग-तृणस्पर्श-मल-सत्कार पुरस्कार -प्रज्ञाज्ञाना-दर्शनानि॥९॥

क्षुधा पिपासा शीत उष्ण औ, दंशमशक या नग्न हुआ।
अरति स्त्री चर्या या निषद्या, शय्या गुस्सा में भी क्या।?
मारे कोई, माँगे कुछ ना हो अलाभ या रोग महा।
तृषा स्पर्श तथा मलपीड़ा पुरस्कार सत्कार रहा॥
प्रज्ञा या अज्ञान साथ में और अदर्शन कष्ट कहा।
इन कष्टों को सहने का ही, नाम परीषह अहो कहा॥९॥

ऊँ ह्रीं स्वरूपहेतुनयेन सूत्रमिदं परीषहसंख्या -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूक्ष्म-सांपरायछद्मस्थ-वीत-रागयोश्चतुर्दश॥१०॥

दसवें एकादश बारहवें, गुणस्थान में परिषह जो ।
उनकी संख्या चौदह रहती, समझाते हैं मुनिगण वो ।
बाधायें जो मोह जनित हैं, वो इनमें नहिं होती हैं।
मोह तजो उपदेश दे रहे, परिषह जिनने झेली हैं॥१०॥

ऊँ ह्रीं विशेषसद्भावनयेन सूत्रमिदं परीषहाध्वान -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकादश जिने॥११॥

मोह कर्म का क्षय करके जो, जिनवर श्री भगवान बने ।
उनके ग्यारह परिषह होती, चार घातिया कर्म हने ।
विष की मारक शक्ति नष्ट तो, फिर विष का क्या काम रहे।
मोहनीय बिन वेदनीय का, उदय रहे निष्काम रहे॥११॥

ऊँ ह्रीं विशेषसद्भावनयेन सूत्रमिदं जिनवरपरीषह-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बादरसाम्पराये सर्वे॥१२॥

जिनके होती थूल कषायें, बादर साम्पराय कहते ।
छह से नौ तक गुणस्थान को, बादर साम्पराय कहते ।
सभी परीषह इनमें होती, कहते ऐसा जिनवर हैं।
समता से सब सहते जाते, धन्य धन्य वो यतिवर हैं॥१२॥

ऊँ ह्रीं विशेषसद्भावनयेन सूत्रमिदं विशेषपरीषहाध्वान -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने॥१३॥

ज्ञानी प्रज्ञावान कहावें, तो भी मन ना हरषाये ।
तथा कहे अज्ञानी कोई, तो भी मन ना मुरझाये ।
ज्ञानावरणी कर्म उदय से, परिषह ये दौनों होती।
सहते कर्म दहन करते जो, उनकी ही मुक्ति होती॥१३॥

ऊँ ह्रीं कर्मोपाधिसापेक्षअशुद्धद व्यार्थिकनयेन सूत्रमिदं ज्ञानावरणजनितपरीषह -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन-मोहान्तराययोरदर्शना-लाभौ॥१४॥

दर्शन मोह का उदय रहे तो, परिषह एक अदर्शन हो ।
अन्तराय का उदय रहे तो, एक अलाभ परीषह हो ।
कर्म उदय ये सुखा में बाधक, मर्म एक यह पहिचानो।

शाश्वत शर्म मिलेगा तब ही, धर्म शास्त्र गुरु को मानो॥१४॥

ऊँ ह्रीं कर्मोपाधिसापेक्षअशुद्धदव्यार्थिकनयेन सूत्रमिदं कर्मद्वयजनितपरीषह -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चारित्र-मोहे नाग्न्यारति-स्त्री-निषद्या-क्रोश-याचना-सत्कार पुरस्काराः॥१५॥

चरित मोह का उदय रहे जब, परिषह सात साथ होते ।
नाग्न्या नारी अरति निषद्या, आक्रोशित वाणी सहते ।
तथा याचना परिषह भी औ, सहें माना अपमान सभी।
बाधायें जिन जिन ने झेली, मुक्ती राधा मिली तभी॥१५॥

ऊँ ह्रीं कर्मोपाधिसापेक्षअशुद्धदव्यार्थिकनयेन सूत्रमिदं चारित्र-मोहदयजनितपरीषह-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वेदनीये शेषाः॥१६॥

क्षुधा पिपासा दंशमशक वा, शीत उष्ण हो चर्या हो ।
शय्या वध संस्पर्श तृणो ंका, रोग मैल -तन शय्या हो ।
कर्म वेदनी उदय रहे तो, परिषह ये ग्यारह होती ।
ध्यान रहे पर मोहनीय बिन, काम नही ं ये कुछ करतीं॥१६॥

ऊँ ह्रीं कर्मोपाधिसापेक्षअशुद्धद्रव्यार्थिकनयेन सूत्रमिदं वेदनीयकर्मजनितपरीषह -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नैकोनविंशतेः॥१७॥

शीत उष्ण में एक परीषह, एक समय में इक होगी।
चर्या शय्या और निषद्या, एक समय में इक होगी।
अत: तीन कम हो जावें तो, परिषह एक साथ उन्नीस ।
मुनिवर जो बनते सहते वो, तब बनते हैं मुनिवर ईश॥१७॥

ऊँ ह्रीं कर्मोपाधिसापेक्षानित्याशुद्धपर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं युगपत्परीषह -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सामायिकच्छेदो-पस्थापनापरिहारविशुद्धि-सूक्ष्मसाम्पराय-
यथा ख्यात-मिति चारित्रम्॥१८॥

मोक्ष महल तक ले जाने को, चारित पंच प्रकार कहा।
सामायिक छेदोपस्थापन, वा परिहार विशुद्धि महा।
सूक्ष्म साम्पराया चरित्रा, यथाख्यात विधि बतलाया।
कर्मों का क्षय करके जिनने, शिव सुख पथ को दरशाया॥१८॥

ॐ ह्रीं भेदकल्पनासापेक्षाशुद्धद व्यार्थिकनयेन सूत्रमिदं चारित्रभेद - ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनशनाव-मौदर्य-वृत्ति-परिसंख्यान-रस-परित्याग-विविक्त
शय्यासन-कायाक्लेशा बाह्यं तपः॥१९॥

धर्म ध्यान की वृद्धी हेतू, अनशन ऊनोदर करना।
भिक्षा हेतू मुनि निकलें तो, वृत्तिपरिसंख्यान धरना।
षट रस त्याग करें आहारा, विविध विविध आसन शय्या।
क्लेश देय तन को तू कर ले, तप बाहिर के छह भय्या॥१९॥

ॐ ह्रीं असद् भूतव्यवहारनयेन सूत्रमिदं बाह्यतपो -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रायश्चित्त-विनय-वैयावृत्त्यस्वाध्याय-
व्युत्सर्ग-ध्यानान्युत्तरम्॥२०॥

प्रायश्चित से दोष दूर कर, विनय भाव धर गुरुओं से।
सेवा वैयावृत्ति तथा हो, स्वाध्याय तप शक्ति से।
ममत त्याग व्युत्सर्ग करें जो, तथा ध्यान की निश्चलता।
अभ्यन्तर तप छह धरने से, परम मोक्ष निश्चित फलता॥२०॥

ॐ ह्रीं सद्भूतव्यवहारनयेन सूत्रमिदं अभ्यन्तरतपो -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नव-चतुर्दश-पञ्च-द्विभेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात्॥२१॥

नव विधि चउ विधि दश भेदों से, तथा पंच दो भेदों से।
तप पन उपभेदों की संख्या, कहते हैं निज-निज क्रम से।

मोक्ष प्राप्ति का मुख्य हेतु है, ध्यान अग्नि की प्रज्वलता।
श्रमण निपुण इन तप में जब हों,तप गुण की तब उज्वलता॥21॥

ऊँ ह्रीं यथाक्रम व्यवहारनयेन सूत्रमिदं अभ्यन्तरतपोभेद -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आलोचना-प्रतिक्रमण-तदुभय-विवेक-
व्युत्सर्ग-तपश्छेद परिहारोपस्थापनाः॥२२॥

नो प्रकार से प्रायश्चित का, विधान करते आगम से।
आलोचन प्रतिक्रमण उभय विधि, मन विवेक व्युत्सर्गों से।
वा तप से दीक्षा छेदन से, संघ रहित कर परिहारी।
दीक्षा देकर उपस्थापना, दोष रहित निज हितकारी॥२२॥

ऊँ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं विनयतपोभेद -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान-दर्शन-चारित्रोपचाराः॥२३॥

चउ विध विनय तपों को, नय उपनय के ज्ञाता जो।
विनय ज्ञान की वा दर्शन की, बिना दोष के करते जो।
सम्यक शुचि चारित्रवान हों, विनय चरित की बतलाई ।
परोक्ष रूप से गुरु गुण गुनना, विनय उपचरित है भाई॥२३॥

ऊँ ह्रीं विकल्पनयेन सूत्रमिदं विनयतपोभेद -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आचार्योपाध्याय-तपस्वि-शैक्ष्य-ग्लान-गण-
कुल-संघ-साधु मनोज्ञानाम्॥२४॥

वैयावृत्ती तप विधि कहते, सिंहवृत्ति के धारक जो।
आचारज उवझाय तपस्वी, शैक्ष ग्लान गुण आगर को।
गण हो कुल हो तथा संघ हो, चिर दीक्षित जो साधू हो।
वा मनोग्य मुनि की सेवा में, मन विवेक से तत्पर हो॥२४॥

ऊँ ह्रीं चारित्रचर्यासम्बन्धिउपचरितासद्भूतव्यवहारनयेन सूत्रमिदं वैयावृत्तिभेद-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वाचना-पृच्छनानु-प्रेक्षाम्नाय धर्मोपदेशाः॥२५॥

स्वाध्याय तप के पन भेदा, कहते जो निज अध्यायी।
शास्त्र वाचना अर्थ बताना, प्रश्न पूछना सुखदायी।
पढ़े हुए का मन में चिन्तन, मनन करें वो अनुप्रेक्षा।
तथा नित्य आम्नाय शुद्धता, तब हो धर्म सदुपदेशा॥२५॥

ऊँ ह्रीं ज्ञानाज्ञेयसम्बन्धिउपचरितासद्‌भूतव्यवहारनयेन सूत्रमिदं स्वाध्यायभेद-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाह्याभ्यन्तरोपध्योः॥२६॥

त्याग भाव व्युत्सर्ग कहा है, दो भेदों से यह जानो।
बाहर अन्तर उपधि त्याग के, निज को निज में पहिचानो।
निजानन्द समरसी भाव में, मुनि का जब उपयोग रुके ।
चेतन तरु में तप फल द्वारा,मधुर-मधुर निज रस टपके॥२६॥

ऊँ ह्रीं त्यागत्याज्यसम्बन्धिउपचरितासद्‌भूतव्यवहारनयेन सूत्रमिदं व्युत्सर्गतपोभेद-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तमसंहननस्यैकाग्र-चिन्ता-निरोधो ध्यान-मान्तर्मुहूर्तात्॥२७॥

ध्याता उत्तम संहनन धारी, वृत्ति चित्त की निश्चल हो ।
विमुख बाह्य से उन्मुख निज में, इक पदार्थ में ही थिर हो।
अन्तर एक मुहूरत ही तो, ध्यान अग्नि का काल रहे ।
तभी प्रगट केवल रवि जिसमें, द्रव्य चराचर झलक रहे॥२७॥

ऊँ ह्रीं ध्यानध्येयसम्बन्धिउपचरितासद्‌भूतव्यवहारनयेन सूत्रमिदं ध्यानतपो -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आर्त-रौद्र-धर्म्य-शुक्लानि॥२८॥

ध्यान चक्र से भव सन्तति को, ध्वंस किया औ मुक्त हुए।
ऐसे ध्यानी ज्ञान प्राप्त कर, जग जीवों को विदित किये।
आर्त रौद्र वा धर्म शुक्ल से, चौ विधि ध्यान सकलता हैं
क्या तजना है क्या गहना है, सुनो-सुनो यदि थिरता है॥२८॥

ऊँ ह्रीं सोपाधिकाशुद्धनिश्चयनयेन सूत्रमिदं ध्यान-भेद-ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परे मोक्ष-हेतू॥२९॥

कहे अन्त में धर्म शुक्ल जो, ध्यान वही शुभ कहलाते ।
परम मोक्ष पद के कारण वे, जिनसे जग जन सुख पाते ।
तथा आर्त वा रौद्र ध्यान तो, भव सन्तति के कारण हैं।
अशुभ हेतु यह पाप बन्ध के, कारण हैं दुख दारुण हैं॥२९॥

ऊँ ह्रीं सोपाधिकैकदेशशुद्धनिश्चयनयेन सूत्रमिदं मोक्षहेतुभूतध्यान - ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आर्तममनोज्ञस्य सम्प्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः॥३०॥

निज जन धन तन के नाशक जो, विष जल शस्त्र सिंह अग्नी।
तथा दुष्ट जन वैरी राजा, बिल जल वन के जीव धनी।
अन्य अनिष्ट पदारथ जो भी, देखों सुनें समागम हो।
कब वियोग हो क्लिष्ट मना हो,आर्त ध्यान यह प्रथम अहो॥३०॥

ऊँ ह्रीं असद्भूतव्यवहारनयेन सूत्रमिदं प्रथमआर्तध्यानविनाशाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विपरीतं मनोज्ञस्य॥३१॥

मन की प्यारी वस्तू हो वा, सुत मनहर नारी भोगा।
ध्वंस होय वा होय वियोगा, मन में पीड़ा नित शोका।
बार बार चिंता मन पागल, वस्तु मिलेगी अब कब वो।
दूजा आर्त ध्यान है भाई, पाप ताप का ईंधन जो॥३१॥

ऊँ ह्रीं असद् भूतव्यवहारनयेन सूत्रमिदं द्वितीयार्तध्यानविनाशाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वेदनायाश्च॥३२॥

वात पित्त कफ कोप प्रकोप, कास भगंदर कोढ़ जरा।
देखे सुने न रोग जु पहिले, प्रगट होय मन खोद भरा।
दिवस रैन दुख से व्याकुलता, सह न सके पीड़ा भारी।
पीड़ा चिन्तन आर्त ध्यान है, दुर्निवार दुख आगारी॥३२॥

ऊँ ह्रीं कर्मोदयवेदकाशुद्धनिश्चयनयेन सूत्रमिदं तृतीयार्तध्यान विनाशाय

अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निदानं च॥३३॥

भोगीन्द्रो के भोग मिलें वा, देव लोक की लीलायें ।
तीन भुवन की राज्य सम्पदा, कामदेव सा तन पायें ।
पूजा लाभ प्रतिष्ठा देखो, यह सब मेरी कैसे हो ।
चौथा ध्यान निदान यही है, तृष्णा पूरण कैसे हो॥३३॥

ऊँ ह्रीं कर्मफलोदयकारकाशुद्धनिश्चयनयेन सूत्रमिदं चतुर्थार्तध्यान विनाशाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तदविरत -देशविरत-प्रमत्त-संयतानाम्॥३४॥

पहिले दूजे तीजे चौथे, गुणस्थान के जीवों के।
देश विरत श्रावक हो पंचम, मुनि प्रमत्त संयम यति के।
आर्त ध्यान की जनन भूमि में, ये जीवा ही बसते हैं।
रहित निदान ध्यान से मुनिवर, तीन भेद रख सकते हैं॥३४॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं आर्तध्यान-स्वामि -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हिंसानृत-स्तेय-विषय-संरक्षणेभ्यो रौद्र-मविरत-देशविरतयोः॥३५॥

हिंसा चोरी झूठ कर्म में, परिग्रह संचय चिन्ता में।
रमते हैं आनन्द मानते, रुद्र भाव के आशय में ।
पहिले से पंचम सीढ़ी के, ही जीवा यह कर सकते ।
रौद्र ध्यान से महा भयानक, दुक्ख न कोई यति कहते॥३५॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं रौद्रध्यानस्वामि - ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आज्ञापाय-विपाक-संस्थान-विचयाय धर्म्यम्॥३६॥

आत्म तत्त्व की रुचि जाग्रत हो,निश दिन निज का ध्यान रहे।
धर्म ध्यान वह चौ विधि होता, मन में कुछ ना ग्लान रहे।
जिनवर आज्ञाविचय प्रथम है, दूजा कर्म अपाय विचार ।
तीजा कर्म विपाक चिन्तवन, अन्तिम लोकाकार विचार॥३६॥

ऊँ ह्रीं भेदोपचारनयेन सूत्रमिदं धर्म ध्यानभेद - प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः॥३७॥

निज स्वरूप के उन्मुख रहता, निष्क्रिय शुचितर उपयोगा।
मणि सम धवल उज्ज्वल आतम, शुक्लध्यान से ही होगा।
प्रथम शुक्ल दो ध्यान धारते, अंग पूर्व के जो ज्ञाता।
शुद्ध चरित मुनि धीर वीर हो, करते भव दुख का घाता॥३७॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं प्रथमद्वितीय-शुक्लध्यान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परे केवलिनः॥३८॥

राग द्वेष से रहित हो गये, पूर्ण हुए केवलज्ञानी।
योग सहित औ योग रहित जो, केवलि वो भी हैं ध्यानी।
अन्तिम शुक्ल ध्यान दो उनके, क्रमशः ऐसे होते हैं।
श्रुत आलम्बन रहित होत हैं, ज्ञानी ऐसा कहते हैं॥३८॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं तृतीयचतुर्थ-शुक्ल ध्यान- ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पृथक्त्वैकत्व-वितर्क-सूक्ष्म क्रिया-प्रति-
पाति-व्युपरत-क्रिया निवर्तीनि॥३९॥

कहे चार विधि शुक्ल ध्यान के, नाम यहाँ अब बतलाते ।
प्रथम पृथक्त्व वितर्क ध्यान से, घाते मोह कर्म जाते ।
सह वितर्कएकत्व दूसरा, सूक्ष्मक्रियाअप्रतिपाती।
व्युपरतक्रियानिवृती चौथा, मुक्ती जिससे मिल जाती॥३९॥

ऊँ ह्रीं शुद्धपर्यायार्थिकनयेन सूत्रमिदं शुक्लध्यानभेद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्र्येक-योग-काय-योगा-योगानाम्॥४०॥

मन तन वचन योग के योगी, प्रथम ध्यान को ध्याते हैं।
एक योग में लीन हो य के, दूजा ध्यान जु पाते हैं।

केवलि भगवन्तों को केवल, काय योग से ध्यान बने।
अयोग केवलि योगिजनों को, योग रहित हो ध्यान बने॥४०॥

ऊँ ह्रीं अनुपचरित-असद् भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं ध्यानयोगज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकाश्रये सवितर्क-वीचारे पूर्वे॥४१॥

ध्यान प्रथम दो ध्याने वाले, एकाश्रय ले बढ़ते हैं।
पूर्व विदों के श्रुत ज्ञानी हों, दृढ़ता से तब चढ़ते हैं।
बदल बदल जाते वितर्क से, वा वीचार सहित होते।
शुक्ल ध्यान के प्रथम चरण के, ध्यानी के ये गुण होते॥४१॥

ऊँ ह्रीं विशेषनयेन सूत्रमिदं ध्यानैकाग्रता-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अवीचारं द्वितीयम्॥४२॥

किन्तु दूसरा शुक्ल ध्यान को, ध्याने वाले जो ध्यानी।
उनमें कुछ अन्तर होता है, समझाती है गुरु वाणी।
नहीं रहे वीचार ध्यान में, एक रूप में स्थित हों।
अवीचार एकत्व ध्यान का, पृथक रहा कुछ लक्षण यों॥४२॥

ऊँ ह्रीं विशेषनयेन सूत्रमिंद द्वितीयशुक्लध्यानयोग्यता प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वितर्कः श्रुतम्॥४३॥

अब वितर्क का लक्षण कहते, निर्वितर्क निज ज्ञान हुआ।
तर्क विचारण ऊहापोह, नाम वितर्क प्रधान हुआ।
श्रुतज्ञान को ही वितर्क से, कहा गया है आगम में।
ध्यान धुरा को पैनी करने, कर्म काटने कारण में॥४३॥

ऊँ ह्रीं सोपाधिकाशुद्धनिश्चयनयेन सूत्रमिदं ध्यानयोग्यश्रुतज्ञान -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीचारोऽर्थव्यञ्जनयोग-संक्रातिः॥४४॥

परिवर्तन संक्रान्ति कहाती, नाम उसी का वीचारा।

एक अर्थ से अन्य अर्थ की, प्राप्ती अर्थान्तर धारा ।
या व्यंजन की संक्रान्ती हो, तथा योग की संक्रान्ती।
इन तीनो ंकी संक्राती में, उपयोगा हो बिन क्रान्ती॥४४॥

ऊँ ह्रीं क्रियानयेन सूत्रमिदं योगसंक्रान्तिरहितध्यान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्दृष्टि श्रावक विरतानन्त वियोजक-
दर्शनमोह-क्षपकोपशमकोपशान्त-मोह क्षपक-क्षीणमोह
जिनाःक्रमशोऽसंख्येय गुण-निर्जराः॥४५॥

कहाँ कहाँ पे जीवो ं की यूँ अधिक निर्जरा है होती,
सम्यग्दृष्टी से श्रावक की, श्रावक से मुनि महाव्रती।
प्रथम कषाय विसंयोजक की, दर्श मोह क्षय करने की,
चरित मोह उपशामकता से, मोह उपशमन वालो ं की।
श्रेणी क्षपक चढ़ें उनसे भी, क्षीण मोह की जिनवर की,
गुणित असंख्याती क्रम क्रम से, रहे निर्जरा भविजन की॥४५॥

ऊँ ह्रीं वर्तमाननैगमनयेन सूत्रमिदं सर्वनिर्जरास्थान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुलाक-बकुश-कुशील-निर्ग्रन्थ-स्नातकाः निर्ग्रन्थाः॥४६॥

बाह्यान्तर परिग्रह के त्यागी, निर्ग्रन्था मुनि पंच विधा।
नाम पुलाक बकुश हो संज्ञा, वा कुशील वा निर्ग्रन्था।
तथा स्नातका मुनि कहलाते, केवलज्ञानी जो होते।
चारित की हीनाधिकता से, नाम मुनी के ये होते॥४६॥

ऊँ ह्रीं वर्तमाननै गमनयेन भाविनैगमनयेन च सूत्रमिदं भावलिङ्गसहितनिर्ग्रन्थपद -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संयम-श्रुत-प्रतिसेवना-तीर्थलिंग-लेश्योपपाद-
स्थान-विकल्पतः साध्याः॥४७॥

इन मुनियो ं के और भेद भी, जानो ं विविध विवक्षा से।
संयम से श्रुत, प्रतिसेवन से, तीर्थ लिंग लेश्याओ ं से।
उपपादा संयम थानो ं से, भी इनमें अन्तर होता।

अन्तरंग में मोक्ष तत्त्व का, भंग प्रकट सबको होता॥४७॥

ऊँ ह्रीं भेदोपचारनयेन सूत्रमिदं निर्ग्रन्थलिङ्गभेद -ज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(महार्घ्य)

व्रत समिति गुप्ति पालन से, संवर निर्जर होता है
धर्म शुक्ल ध्यानों का फल ही, नौवा पाठ संजोता है।
जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रुचिर चरु रत्नों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्यं समर्पित सूत्र समीप॥

ऊँ ह्रीं जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रे नवमऽध्यायेभ्यो महाअर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

(इति मण्डलोस्परि पुष्पांजलिं.....)

दशम अध्याय

मोह-क्षयाज्ज्ञान-दर्शना-वर-णान्तराय-क्षयाच्च केवलम्॥१॥

(शार्दूल विक्रीडित)

प्राप्ती हो शिव धाम की अब गुरु, दो ज्ञान कैवल्य का।
भव्यात्मा बस मोह का क्षय करें, प्रारम्भ हो कार्य का।
दृगज्ञानावरणान्तराय विधि का, हो अन्त तो साथ में ।
चैतन्या चमके चमाचम चरा, त्रै रत्न के साथ में॥१॥

ऊँ ह्रीं व्यवहारनयेन सूत्रमिंद केवलज्ञान-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बन्धहेत्वभाव-निर्जराभ्यां कृत्स्न-कर्म-विप्रमोक्षो मोक्षः॥२॥

हेतू बन्धन के कहे अब तजो, जो बन्ध के द्वार हैं।
होता था नव बन्ध वो रुक गया, तो मुक्ति आधार है।
आत्मा से पहिले लगे करम जो, छूटें वही निरजरा।
अत्यन्ता विलगा हुआ करम से, आत्मा हि सिद्धीश्वरा॥२॥

ऊँ ह्रीं व्यवहारनयेनसूत्रमिदं मोक्षफल-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

औपशमिकादि-भव्यत्वानां च॥३॥

क्या द्रव्या करमा हने तब बने, मोक्षादि की भूमिका।
वा भावा करमा तु भी नशत हैं, सिद्धा महा आप्त का?
भावा हाँ उपशामकादि क्षय हों, भव्यत्व का भाव वा।
जैवत्वी परिणामिकी इक रही, शक्ती उदारा जहाँ॥३॥

ऊँ ह्रीं नास्तिस्वभावनयेन सूत्रमिदं मोक्षायोग्यभाव-विनाशाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्यत्र केवल-सम्यक्त्व-ज्ञान-दर्शन-सिद्धत्वेभ्यः॥४॥

भावा क्षयिक शेष जो बच गये, उल्लेखिता वो करें ।
सम्यक्त्वा अरु ज्ञान दर्शन तथा सिद्धत्व भावा धरें ।
वीर्यानन्त तथा अनन्त सुख तो, ज्ञानादि के साथ हैं।
सम्पत्ती सुख ज्ञान की यदि मिले, सच्चा वही पाथ है॥४॥

ऊँ ह्रीं अस्तिस्वभावनयेन सूत्रमिदं सिद्धात्मभाव-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त-दनन्तर-मूर्ध्वं गच्छत्या-लोकान्तात्॥५॥

हो जाता जब जीव मुक्त भव से, जाता कहाँ ये भला।
कैसे हो चलना कहो गगन में, कैसे पता पा चला।
लोकान्ता तक जीव का गमन हो, ऊर्ध्वा दिशा ही रहे।
ना नीचे तिरछा चले गगन में, क्या बात है ये कहें॥५॥

ऊँ ह्रीं स्वभावनयेनसूत्रमिदं सिद्धगति-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व-प्रयोगा-दसंगत्वाद्-बन्धच्-छेदात्तथा-गति-परिणामाच्च॥६॥

संस्कारा पहिले जु थे पड़ गये, औ कर्म भारा घटा।
उच्छेदा विधि बन्ध से जब हुआ, ऊर्ध्वा स्वभावा जु था।
चारों कारण जीव को जब मिले, सीधा व ऊर्ध्वा गया।
आयी ना गुरु बात ये समझ में, दृष्टान्त दे तब कहा॥६॥

ऊँ ह्रीं नियतनयेन सूत्रमिदं स्वाभाविकचिच्छक्ति-प्राप्तये अर्घ्यं

निर्वपामीति स्वाहा।

आविद्धकुलाल-चक्रवद्-व्यपगत-लेपालाम्बु-
वदेरण्डबीज-वदग्नि शिखावच्च॥७॥

घूमे चाक कुलाल का बिन छड़ी, संस्कार से पूर्व ज्यों।
तुम्बी मैल मलीन से रहित हो, तैरे तला नीर ज्यों।
बीजा ज्यों उचटे तु ऊपर चले, ऐरण्ड का जीव त्यों।
सीधी दीपक लौ सदैव नभ में, कर्मा बिना जीव त्यों॥७॥

ॐ ह्रीं उपचरित-असद्भूत-व्यवहारनयेन सूत्रमिदं निजोर्ध्वस्वभावगति -प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मास्तिकायाभावात्॥८॥

जीवों का तु स्वभाव उर्ध्व गमना, सीमा कहाँ जो गया।
क्यों जाके वह अन्त में रुक गया, इच्छा नहीं ना भया?
द्र व्यों में इक धर्म द्रव्य सतता, फैला जु आकाश में।
ता सीमा नहिं लाँघ के चल सके, धर्मास्ति के बाद में॥८॥

ॐ ह्रीं नास्तिस्वभावनयेन सूत्रमिदं निजस्वभावस्थिति-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षेत्र-काल-गति-लिंग-तीर्थ-चारित्र-प्रत्येकबुद्ध-बोधित-ज्ञाना
वगाहनान्तर-संख्याल्प-बहुत्वतः साध्याः॥९॥

क्षेत्रा काल गती चरित्र विधि वा, लिंगा बुधा बोधिता।
ज्ञाना वा अवगाहना करण से, अन्तर बड़ा धारता।
संख्या अल्प-बहुत्व तीर्थ विविधा, सिद्धात्म में भेद हो।
वा प्रत्येक सु बुद्ध मुक्ति मति से, चैतन्य का ध्यान हो॥९॥

ॐ ह्रीं भेदोपचारनयेन सूत्रमिदं सर्वविकल्परहितशुद्धात्मतत्त्व-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(महार्घ्य)

केवलज्ञानी होकर आतम, सिद्ध मोक्ष पद पाता है
यह अध्याय बताता दसवां, शिव सुख अनुपम लाता है।

जल चन्दन अक्षत कुसुमन ले रुचिर चरु रतनों के दीप
शुद्ध धूप अरु सर्व फलों का अर्घ्य समर्पित सूत्र समीप॥

ऊँ ह्रीं जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रे दशमाऽध्यायेभ्यो महाअर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

(इति मण्डलोस्परि पुष्पांजलिं.....)

जयमाला

किया महा उपकार गुरू ने, सूत्र बनाए प्रामाणिक
बड़े-बड़े आचार्यों ने भी टीका लिखी बड़ी तात्विक।
एक-एक सूत्रों में कैसा, गहरा अर्थ समाया है
पूज्यपाद अकलंकदेव ने, इनका हार्द बताया है॥१॥
तथा आर्य विद्यानन्दि ने, पर प्रवादि मति वाणों से
सूत्रों की रक्षा की भारी सुश्लोक और वार्तिक से
रहे अभेद्य सूत्र हर एक, बौद्ध सांख्य नैयायिक से
भव तरने की नाव मिली है, उमास्वामि गुरु नाविक से॥२॥
तत्त्व और छह द्रव्यों का सब, वर्णन यह लोकोत्तर है
तर्क कुतर्क सभी प्रश्नों का, इसमें मिलता उत्तर है।
जयवन्तो सर्वज्ञ देव श्री, वीर प्रभु हित उपदेशी
जयवन्तो गणधर परमेष्ठी, जग हितकारी जिनभेषी॥३॥
ज्यों दर्पण में सब दर्शन पा नैनवन्त हर्षाये हैं
त्यों ही ये तत्त्वार्थसूत्रजी, भव्यनि मोक्ष कराये हैं।
जीव अजीव बन्ध अरु आस्रव संवर और निर्जरा मोक्ष
सप्त तत्त्व का इसमें वर्णन, जीवों को दे सम्यक् बोध॥४॥

ऊँ ह्रीं जिनमुखोद्भव-उमास्वामिविरचित - तत्त्वार्थसूत्रे दशाऽध्यायेभ्यो जयमाला महाअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पुष्पांजलिं....)

सरस्वती स्तवन

गी गौतमा गुण गणी गण नायिका है।

ज्ञानादि काव्य कविता मति दायिका है।
माता कृपा कर पिता-प्रभु से मिला दे।
विद्या सुधा रस पिला मुझको जिला दे।

विद्या गुरु स्तवन

मोह भ्रान्ति से भटक गये हैं, भव वन में जग के प्राणी।
शशि सम मनहर सूरत तोरी, शान्ति सुधा देती वाणी।
तथा चन्द्रमा पुष्ट करें ज्यों, नीर राशि के सागर को।
'विद्यासागर' गुरुवर भर दो, त्यों खाली मम गागर को॥

स्थान परिचय

नदी नर्मदा तीर पे, 'कूट सिद्धवर' धाम।
शुद्ध सिद्ध के पद नमूँ, छूटे अघ की घाम॥

समय परिचय

रागद्वेष पन पाप तज, उपयोगा द्वय लीन।
रत्नत्रय को धार के, वीर महोत्सव कीन॥अ॥
तीज शुक्ल बैसाख की, अक्षय तिथी महान।
पद्यमयी अनुवाद कर, किया निज निधी ज्ञान॥ब॥

(वीरनिर्वाण संवत् २५२३ (ई. सन् १९९७) में यह पद्यानुवाद अक्षय तृतीया को सिद्धवरकूट में पूर्ण हुआ।)

क्षमा याचना

अर्थ शब्द की भूल यदि, पढ़ लो सुधी सुधार।
विद्या गुरु सम भेष धर, निज 'सर्वेश' निहार॥

॥ इति॥

प्रार्थना

मेरा मन समर्थ हो

मेरी प्रभु से प्रार्थना आत्म शक्ति अर्थ हो
मेरा मन समर्थ हो, मेरा मन समर्थ हो
मेरा जो बुरा करे , जो मुझे न चाहता
मेरी बात को सदा जो द्वेष से नकारता
मेरे मन में उसके लिए साम्यभाव हो सदा,
बैर अरु विरोध में, पल न मेरा व्यर्थ हो
मेरा मन समर्थ हो, मेरा मन समर्थ हो।1।

हम किसी के कार्य में कभी न विघ्न डाल दें
झूठ, छल, फरेब से न उलझनो ंका जाल दें
दूसरो ंकी उन्नति में मन की हो प्रसन्नता,
प्रेम भावना की धार,दृष्टि में तदर्थ हो।
मेरा मन समर्थ हो, मेरा मन समर्थ हो।2।

भले न मेरी चाह कभी पूर्ण हो अपूर्ण हो
मन मेरा उत्साह से उमंग से परिपूर्ण हो
रोग में वियोग में न आए कभी खिन्नता,
हम सदा ही खुश रहें ये भावना सशर्त हो।
मेरा मन समर्थ हो, मेरा मन समर्थ हो।3।

देश के उत्थान में धर्म के प्रचार में
सत्य शान्ति मित्रता अहिंसा के प्रसार में
परोपकार में रहे सदा हमारी भावना
मेरी उम्र में नही ंकिसी भी क्षण अनर्थ हो।
मेरा मन समर्थ हो, मेरा मन समर्थ हो ।4।

- मुनि श्री प्रणम्यसागर जी महाराज कृत

श्री तत्त्वार्थसूत्र
मण्डल विधान

रचयिता
मुनि श्री प्रणम्यसागर जी

- आशीर्वाद -

अध्यात्म सरोवर के राजहंस आचार्य प्रवर
श्री 108 विद्यासागर जी महाराज

अध्यात्म सरोवर के राजहंस आचार्य प्रवर
श्री विद्यासागर जी महाराज

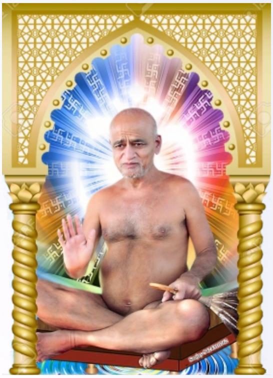

विद्याष्टकम्

(बसन्ततिलकाच्छन्दः)

सुश्रीमतीह जननी च पिता मलप्पा, जज्ञे द्वितीयतनयो भुवि योऽद्वितीयः।
विद्याधरोऽपि सुतरां हृदयस्थविद्यो, विद्यादिसागरमुनीन्द्र! हरारिविद्याः॥1॥

पापास्पदानि निविड़ानि विभञ्ज जनार्थं, पुण्यास्पदानि विविधानि विवर्धनार्थम्।
कर्माणि वर्यवर! ते शरणं दधेऽहं, प्रीणातु मां भवहरं चरणारविन्दम्॥2॥

सद्दृष्टिबोधचरणावरणैकभूषा- सद्वीर्यवासिततपोधरणैकवेषम् ।
यस्यांगदेवनिलयस्य विभूषणं स्यात्, तस्य प्रवन्द्यचरणं परिणौमि भक्त्या॥3॥

यस्मान्भवद्विशददेहमनोविचेष्टास्, स्याद्वादगुम्फितवचाः प्रमुदे विशुद्धाः।
तस्मात् सदैव सुजनैः परिवेष्टमानश्, चन्द्रो यथा वियति राजति तारकाभिः॥4॥

संसारसिन्धुमतुलं तरितुं तु कोऽलं, यस्मिन् विमूढमनसा विगतोऽतिकालः।
विद्यापते! गुरुगुरो! कृपया महाध्वा, प्राप्तो मयाऽपि भवतो भवतः सुरक्षा॥5॥

नाशीर्वचः कमपि पश्यति नापि दृग्भ्या- मात्यन्तिकं विरतभावमुखं विधत्ते।
तस्मादहं भगवतोप्यनुभामि शस्यो, नम्रे जने वितनुते रतिमेष सूरिः॥6॥

येनैध्यते विनयमूलमुदस्य दोषं, ज्ञानार्कभूरिकिरणैर्भुवि पुण्यसस्यम्।
क्षिप्तं क्षणं प्रतिनवं जगतां हिताय, किं चिन्त्यते नु महते सुगुरोर्हिताय॥7॥

यावत्प्रतिष्ठत इला गगनाम्बुराशि- र्मार्तण्डकारितदिवारजनीविभागः।
यावत्प्रवन्द्यजिनचैत्यवृषञ्च भूमौ तावत्तनोतु सुगुरोर्गुणकीर्तिगानम् ॥8॥

(मन्दाक्रान्ता छन्द)

विद्यावार्धेः शुभकरकृपाबाणविद्धं शिरो मे
बोधेर्लाभो विबुधचरितं चास्तु तुल्यात्मभावः।
कामाराती भमददलने साहसं पापताति -
दूरे प्रास्तां हृदयसरसीष्टं चिरं वर्धतां वा॥9॥

परम प्रभावक मुनि श्री प्रणम्य सागर जी महाराज का

जीवन परिचय

पूर्व नाम : ब्र- सर्वेश जी

पिता का नाम : श्री वीरेन्द्र कुमार जी जैन

माता का नाम : श्रीमति सरिता देवी जी जैन

भाई : सचिन जैन

बहन : सपना जैन

जन्म : 13-09-1975,
भाद्रपद शुक्ल अष्टमी
भोगाँव, जिला मैनपुरी (उ.प्र.)

वर्तमान में : सिरसागंज (फ़िरोजाबाद, उ.प्र.)

शिक्षा : बी.एस.सी. (अंग्रेजी माध्यम)

गृह त्याग : 09-08-1994

क्षुल्लक दीक्षा : 09-08-1997, नेमावर

ऐलक दीक्षा : 05-01-1998, नेमावर

मुनि दीक्षा : 11-02-1998 माघसुदी 15, बुधवार,
मुक्तागिरी जी

दीक्षा गुरू : आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज

मुनि श्री प्रणम्यसागर जी द्वारा साहित्य सृजन

संस्कृत भाषा में टीका ग्रन्थ

1. लिङ्गपाहुड़ (नन्दिनी टीका)
2. शील पाहुड़ (नन्दिनी टीका)
3. समाधि तन्त्र (आर्हतभाष्य)
4. चैतन्य चन्द्रोदय (चन्द्रिका टीका)
5. बारसाणुवेक्खा (कादम्बिनी टीका)
6. आत्मानुशासन (स्वस्ति टीका)
7. पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय (मंगला टीका)
8. प्रश्नोत्तर रत्नमालिका ('नीति-पथ')
9. तत्त्वार्थ सूत्र (तत्त्व संदीपिनी टीका
10. संस्कृत एवं प्राकृत भक्ति (आठ भक्ति टीका)

हिन्दी में अनुवादित ग्रन्थ

1. सत्कर्म पंजिका
2. दश भक्ति टीका
3. प्रवचनसार (सरोज भास्कर टीका)
4. कथा कोश
5. सत्य शासन परीक्षा
6. युक्त्यनुशासन
7. नाममाला (भाष्य)
8. सत्संख्यादि अनुयोगद्वार
9. पात्रकेसरी स्तोत्र
10. अद्याष्टक स्तोत्र
11. संन्यास एषोस्तु किमात्मघातः
12. चतुर्विंशति तीर्थंकर स्तुति (आ. माघनन्दि)
13. नियमसार
14. समयसार
15. परीक्षामुख
16. प्रतिक्रमण-ग्रन्थत्रयी

पद्यानुवाद

1. पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय
2. प्रश्नोत्तर रत्नमालिका
3. तत्त्वार्थ सूत्र
4. पात्र केसरी स्तोत्र
5. कल्याणमन्दिर स्तोत्र
6. श्री वर्धमान स्तोत्र
7. मंगलाष्टक
8. माघनन्दि कृत अभिषेक पाठ
9. उपयोग शतक

प्रवचन ग्रंथ

1. बारसानुपेक्खा
2. नई छहढाला प्रवचन
3. परमात्म योग (समाधि तन्त्र)
4. जीव विज्ञान (तत्त्वार्थ सूत्र अध्याय-2)
5. लोक विज्ञान (तत्त्वार्थ सूत्र अध्याय-3, 4)
6. मनो विज्ञान (तत्त्वार्थ सूत्र अध्याय-6)
7. व्रत विज्ञान (तत्त्वार्थ सूत्र अध्याय-7)
8. अध्यात्म योग (इष्टोपदेश)

संस्कृत भाषा में मौलिक काव्य ग्रन्थ-

1. स्तुति पथ (इस कृति में निम्नलिखित स्तुतियाँ हैं)
   1. प्रार्थना 2. वीराष्टकम् 3. भरताष्टकम् 4. शारदाष्टकम् 5.कुन्दकुन्दाष्टकम् 6. समन्तभद्राष्टकम् 7.शान्त्यष्टकम् 8. ज्ञानाष्टकम् 9. विद्याष्टकम् 10. मौनाष्टकम् 11. निजबोधाष्टकम् 12. आचार्य श्री ज्ञानसागर प्रशस्ति पत्र 13. आचार्य श्री विद्यासागर पूजन
2. श्रायस पथ
3. सिद्धोदयाष्टकम्
4. श्री वर्धमान स्तोत्र
5. अनासक्त महायोगी (आचार्य श्री का जीवनवृत)
6. उपयोग शतकम्
7. अर्हं अष्टाङ्ग योग शतकम्
8. आ. श्री शान्तिसागर स्तुति शतकम्
9. श्री शान्तिनाथ स्तोत्र (शतकम्)
10. गोवैभवशतकम (आयुर्वेद सम्बन्धी)

प्राकृत भाषा में मौलिक ग्रन्थ

1. तित्थयर भावणा (सोलहकारण भावना प्राकृत)
2. दार्शनिक प्रतिक्रमण
3. अष्टपाहुड़ (प्राकृत टीका 1-6)
4. धम्मकहा
5. प्राकृत रचना भास्कर
6. प्राकृत शिक्षा भाग 1-2-3-4
7. गोम्मटेस पडिमा भत्ति

अन्य मौलिक कृतियाँ

1. युगद्रष्टा (भगवान ऋषभदेव पर उपन्यास)
2. जैन सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य
3. खोजो मत पाओ (लाइफ मैनेजमेन्ट)
4. आलेख पथ (20 सैद्धान्तिक आलेख)
5. समयसार का ज्ञानी आत्मा कौन?
6. अन्तर्गूंज (भजन एवं हाइकू)
7. लहर पर लहर (कविता संग्रह)
8. बेटा! (शिक्षाप्रद सूक्तियाँ)
9. नई छहढाला
10. लक्ष्य (जीवंधर चरित्र)
11. मुनि सुव्रतनाथ विधान
12. अर्हम् दोहावली
13. अर्हं ध्यान योग
14. जिंदगी क्या है? (प्रवचन ग्रन्थ)

संकलन

1. संवाद (आचार्य श्री और बाबा रामदेव की चर्चा)
2. A Talk (संवाद का अंग्रेजी अनुवाद)
3. पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय अनुशीलन

अंग्रेजी भाषा में

1. Fact of Fate (articles)
2. Twelve Contemplation
3. I Love my Soul